नेहरू-हृदय

भूमिका लेखक
कृष्णकान्त मालवीय

लेखक
गोपीनाथ दीक्षित

नेहरू-द्वय

पं० मोतीलाल नेहरू व पं० जवाहरलाल नेहरू

का

संयुक्त परिचय तथा चरित्र-विश्लेषण

लेखक

गोपीनाथ दीक्षित

भूमिका-लेखक

कृष्णकांत मालवीय

प्रकाशक

इंडियन पब्लिशिंग हाउस

इलाहाबाद।

अक्तूबर १९३१ } { मूल्य आठ आने

भूमिका

नेहरू-द्वय की भूमिका लिख देने के लिए मुझसे अनुरोध किया गया है किन्तु मेरी समझ में नहीं आता कि क्या लिखूँ। भारत के अर्वाचीन इतिहास में कोई इन लोगों का उदाहरण नज़र नहीं आता। बड़े बापों के नालायक़ बेटे देखे गये और देखे जाते हैं, साधारण पिताओं के नरपुंगव बेटे देखे गए हैं, किन्तु ऐसे पिता पुत्र कहां हैं जिनके सम्बन्ध में निश्चित रूप से यह कह सकना कठिन हो कि बड़ा कौन है पिता या पुत्र। नेहरू परिवार ने देश को ऐसे ही पिता पुत्र की भेंट की है।

स्वर्गवासी पंडित मोतीलाल, पंडित जवाहरलाल जी से श्रेष्ठ नहीं थे, हर मानी में, यह कौन कह सकता है? देश को अग्रसर करने में, उसे स्वतंत्रता की बलिवेदी पर मिटने के लिये तैयार करने में स्वर्गवासी पंडित जी का अधिक हाथ है यह कौन नहीं मानेगा? कौन इस सत्य से मुँह मोड़ सकता है कि पंडित जी न होते तो महात्मा जी होते और दुनिया भी होती किन्तु देश इतने आगे न होता? कौन इस सत्य को स्वीकार नहीं करेगा कि अगर पंडित जी न होते तो चाहे और कुछ सब होता किन्तु देश की मांग में यह मर्दानगी, यह बाँकपन, यह अकड़, और यह शेरदिली न होती; जानने वाले यह भी जानते हैं कि अगर स्वर्गवासी पंडित जी जिन्दा होते तो महात्मा जी न लार्ड इर्विन

के पास जा सकते, न अस्थायी सन्धि होती, और न आन्दो-लन ही स्थगित होता। इस आन्दोलन को तो वे भारतीय स्वतंत्रता के लिए अन्तिम युद्ध ही सिद्ध करते। किसी के सामने झुकना, किसी के सामने दबना, दबकर कुछ करना तो उनकी 'घुट्टी' या नक्षत्र में था ही नहीं। उनके जीवन का सिद्धान्त तो यह था, "की हंसा मोती चुगे या करि रखे उपास"। करना तो सर्व श्रेष्ठ करना नहीं तो न करना। वकालत में, ऐशो इशरत में, रहन सहन में, साज़ो सामान में, अनन्तर राजनीति, देश सेवा, और नेतृत्व में एक यही सिद्धान्त उनके जीवन का ध्रुव सितारा था। या तो सर्वोपरि, सबके आगे, सर्व श्रेष्ठ, या कहीं नहीं। अपने आगे वे किसी को कुछ नहीं समझते थे, वह कोई हो, किन्तु इसका अर्थ यह नहीं है कि दूसरे की महत्ता का, उसके गुणों का, उसके त्याग का आदर उनके हृदय में कम था, या उसकी वे क़द्र नहीं करते थे। दूसरा प्रधान गुण पंडित जी में 'नेहरू' शब्द और नेहरू परिवार का अभिमान था। जो काम हो उसमें 'नेहरू' सब से आगे हो, जो बात हो उस पर 'नेहरू' की छाप हो और जो चीज़ हो, वह 'नेहरू' ब्रैन्ड हो। इस भाव ने उनको सदा आगे क़दम रखने के लिये ही प्रोत्साहित किया।

ज्येष्ठ भ्राता स्वर्गवासी नन्दलाल जी ने सम्पत्ति पैदा की थी, पंडित जी को उत्तराधिकार मिला। नन्दलाल जी ने

मृत्यु शय्या से एक बात पंडित जी से कही थी, और वह यह थी, "मोतीलाल ! इस ख़ानदान को तुमको सुपुर्द करता हूं, इस बाग़ के माली तुम हो, इसको सजाना, इसको बढ़ाना, इसकी रक्षा करना, इसके फूल अलग न होने पावें और इसके जाम का शीराज़ा बिखरने न पाये। पंडित मोतीलाल ने इस ट्रस्ट को ख़ूब निबाहा, और पारिवारिक बाग़ को जितना और जैसा उन्होंने बढ़ाया और सजाया, कोई दूसरा बाप या चाचा कर नहीं सकता। एक एक बच्चे के लिये वे जान देते थे, और बच्चे जब बड़े हो, अपने पैरों खड़े हो, संसार को स्वतंत्रता पूर्वक उपभोग करने के लिये लालायित और उतावले हो पड़े, अलग होने लगे, पंडित मोतीलाल अपने भाई की अन्तिम बात की दुहाई दे बच्चों के आगे रो पड़े। सर्व श्रेष्ठ शिक्षा, सुख और संसार की विभूतियों को बच्चों के लिये मुहय्या करना पंडित जी का ही काम था। पण्डित जी जिस काम को उठा लेते थे, जिस उत्तरदायित्व को ओढ़ लेते थे, इसी तरह से वे उसका अंजाम देते थे।

यही गृहस्थी में, यही वकालत के पेशे में, और यही राजनीतिक क्षेत्र और देश सेवा में उनका मूल मंत्र था। "न दैन्यं न पलायनम्', जो करना सर्व श्रेष्ठ, जहां रहना सब से आगे, शेर बनकर, साथ ही अपने उत्तरदायित्व के पालन के हेतु अपना सब कुछ, अपने को और अपनों को भी मिटा देना। मरते मरते भी इसी-

लिये पंडित जी अपने उत्तरदायित्व को भूल न सके। वर्किंग कमेटी को क्या करना चाहिये या कर रही है इसकी उनको फिक्र थी। मरण शय्या से भी शेर कमेटी के सदस्यों को उनके कर्तव्य का आदेश दे रहा था। अभी नहीं एक समय मृत्यु के चार या पांच दिवस पहले, कमेटी के सदस्य कुछ कमजोरी दिखा रहे थे, किसी प्रस्ताव के सम्बन्ध में नम्र भाषा और भावों का प्रयोग करना चाहते थे, खबर पाते ही शेर ने उन लोगों को अपनी शैय्या के निकट बुलवा भेजा और क्रोध में झपटकर कहा, "निकल जाओ मेरे बंगले से, ऐसा प्रस्ताव इस भवन से पास नहीं हो सकता, जिसका मुंह में उठाना मैंने नहीं सीखा है।"

दम, लगन, हठ, स्वाभिमान, उत्तरदायित्व का पालन, शेर दिली, आन और शान, विद्रोह और युद्ध प्रियता, ये ही पंडित जी के चरित्र की विशेषताएं थीं।

पं० जवाहरलाल जी के चरित्र में विशेषताएं दूसरे प्रकार की हैं। विद्रोह, युद्धप्रियता और उग्रता तो आपकी पैतृक सम्पत्ति है। अपरमिति कार्यशक्ति, डटकर काम करना भी आपने पंडित जी से ही सीखा है किन्तु आपका हृदय बहुत कोमल है, उसमें प्रेम है, और वह दया और इंसानियत के भावों से ओत प्रोत है। आप में सादगी बहुत है और त्याग और कष्ट सहिष्णुता की मात्रा का पुट उससे भी अधिक।

आप आदर्शवादी होते हुए भी व्यवहारिक अधिक हैं किन्तु व्यवहारिक होने का अर्थ आपके कोष में है, "जोखम में आनन्द का अनुभव और उपभोग"। जवाहरलाल जी में एक गुण और भी है और वह है स्पष्टवादिता या गोलमोल भाषा से परहेज़। इसीलिये वह नास्तिकता की ओर अधिक झुकते हैं। पं० जवाहरलाल जी के चरित्र की एक विशेषता यह भी है कि वे कामों को समय से और जल्द से जल्द निपटा देना पसन्द करते हैं। काम का पड़ा रह जाना उनको सह्य नहीं। देश प्रेम उनका उज्वल है और देश के लिये मरमिटने की लालसा आपकी अतुलनीय है।

इन विशेषताओं ने ही आज जवाहरलाल जी को देश का प्यारा और महात्मा जी के बाद देशवासियों के प्रेम और आदर का सर्व श्रेष्ठ स्थल बना दिया है।

यह कह सकना कि पं० मोतीलाल बड़े थे, मेरे लिए कठिन है, साथ ही यह कह सकना भी कि पं० जवाहरलाल बड़े हैं, कठिन है। भविष्य के इतिहास लेखक या ऐतिहासिक अपनी अपनी रुचि और गति मति के अनुसार ही यह तय करेंगे कि कौन किसके नाम से प्रख्यात किया जाय। पं० मोतीलाल जी पं० जवाहरलाल के पिता के नाम से या पं० जवाहरलाल जी पं० मोतीलाल के पुत्र के नाम से। मेरी अपनी धारणा यह है कि नेहरू-द्वय के चरित्र अपनी अपनी आभा से स्वयं

प्रकाशित होने वाले हैं। वे परस्पर विरोधी नहीं, एक दूसरे के पूरक, संयोजक, और सिद्ध और साधक हैं।

दोनों ही एक दूसरे के पूरक हैं और एक का चरित्र दूसरे के चरित्र रूपी शीशे के लिये जिला है। एक दूसरे को प्रस्फुटित और प्रकाशित करता है। मोतीलाल जी के चरित्र की विशेषताएं न होतीं, उनका बड़प्पन, उनकी शान न होती, तो पं० जवाहर-लाल आज शायद इतनी जल्दी और इस तरह न चमकते, साथ ही पं० जवाहरलाल सा पुत्र रत्न न होता तो मोतीलाल जी चाहे संसार के सम्राट होते किन्तु वे न होते जो होगये।

किन्तु कौन बड़ा है, किसके चरित्र में विशेषताएं अधिक हैं इस बहस से मतलब ही क्या? देशवासियों के लिये तो दोनों ही बड़े हैं और दोनों के ही चरित्र अनुकरणीय हैं। किसी भी एक के पीछे चलकर वे बड़े हो सकते हैं और दूसरों के लिए आदर्श छोड़े जा सकते हैं। किसका वे अनुकरण करें यह उनकी रुचि और स्वभाव पर निर्भर है किन्तु इस पुस्तक के पढ़ने का अर्थ यह ज़रूर होना चाहिये कि वे पुस्तक में वर्णित नर-पुङ्गवों के चरित्र-चित्रण से लाभ उठावें और उनका सा नहीं तो उनके समान ही किसी अंशों में होने का प्रयत्न करें।

यदि पाठकों ने ऐसा नहीं किया तो वे पुस्तक लिखने तथा पढ़ने के उद्देश्यों की हत्या कर बैठेंगे।

५-१०-३१ }
प्रयाग, }

कृष्णकान्त मालवीय

विषय सूची

नेहरू-द्वय

प्रथम अध्याय

पंडित मोतीलाल नेहरू

संसार के इतिहास पृष्ठों में ऐसे उदाहरण अंगुलियों पर गिनने योग्य ही मिलते हैं जहां पिता और पुत्र ने एक दूसरे से बढ़ बढ़ कर ख्याति पायी हो। प्राय: यशस्वी पिताओं के अज्ञात पुत्र और अज्ञात पिताओं के यशस्वी पुत्र हुआ करते हैं। बड़े बाप का बड़ा बेटा होना एक आकस्मिक घटना है। इंगलैंड में इस आकस्मिक घटना के तीन उदाहरण मिलते हैं; मिल, पिट और चैम्बरलेन पिता-पुत्र की यशगाथा से ब्रिटिश इतिहास के पृष्ठ रंगे पड़े हैं। भारत के लिये यदि समस्त इतिहास में नहीं तो कम से कम आधुनिक युग में

विषय प्रवेश

नेहरू युगल पहला और एकाकी उदाहरण है। विशेषता यह है कि जहां इंग्लैंड के पिता-पुत्र एक के बाद दूसरे ख्यातिनामा हुए, नेहरू-द्वय ने समकालीन और सहयोगी रहकर राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय यश पाया। भारतीय इतिहास के इस स्वर्णाक्षरों में लिखे जाने वाले क्रांतियुग के निर्माण और संचालन में सबसे अग्रणी रहकर नेहरू पिता-पुत्र ने आधुनिक भारत में महात्मा गांधी के बाद सर्वोपरि लोकप्रिय स्थान प्राप्त किया है। उनके अनन्य त्याग, अपूर्व बलिदान और सतत सेवाओं ने प्रत्येक भारतीय हृदय को जीत लिया है। प्रस्तुत पुस्तक इन्हीं पिता-पुत्र का सम्बन्धित परिचय प्रकाश में लाने का प्रयत्न है। यदि इस उद्योग से जनता का कुछ भी हित हुआ और चरित्रनायकों के गुण-विश्लेषण से उन्होंने कुछ भी 'परायी पीर जानना' सीखा तो मैं अपने परिश्रम को सफल समझूंगा।

वंश-परिचय

नेहरू काश्मीरी ब्राह्मणों की एक प्रशाखा है और अन्य काश्मीरी कुलों की नाईं नेहरू-पूर्वपुरुष भी परम-रम्य काश्मीर में ही रहते थे। मुसलमानी काल में बहुत से काश्मीरी व्यवसाय की खोज में दिल्ली चले आये। इन्हीं उद्योगी पुरुषों में नेहरू वंश के पूर्वज पं राजकौल जी भी थे। राजकौल जी शाही फ़र्मान से बादशाह फ़र्रुख़सियर को शिक्षा देने के लिये बुलाये गये थे। उसी समय से यह वंश आकर दिल्ली में बस गया

और अब तक कुछ अंशों में बसा हुआ है। कई पीढ़ियों बाद गंगाधर जी इस वंश में उत्पन्न हुए; वे प्रतिभा-सम्पन्न पुरुष थे और कई साल तक दिल्ली के कोतवाल रहे। आपके तीन पुत्र हुए—नंदलाल, वंशीधर, मोतीलाल। सन् १८६१ की फ़र्वरी में जब कि मोतीलाल जी माता के गर्भ में ही थे, पं० गंगाधर जी का स्वर्गवास हो गया। उस समय कौन जानता था कि पिता के आश्रय से वंचित यह गर्भस्थ बालक ही एक दिन वंश की मर्यादा को उन्नति के शिखर पर पहुँचा देगा तथा भारत का भाग्य विधायक बन कर अपना नाम अमर करेगा और अपने बाद भी भारत को ही नहीं संसार को जगमगाने वाले जवाहर को छोड़ जावेगा।

पं० मोतीलाल जी का जन्म ६ मई सन् १८६१ ईस्वी के दिन दिल्ली में हुआ। पं० नन्दलाल जी ने स्नेहमय दत्तचित्तता के साथ आपका पालन पोषण किया। बारह वर्ष की अवस्था तक

शिक्षा

आपकी प्रारम्भिक शिक्षा मुसलिम मकतब में हुई। इसी काल में आपने फ़ारसी और अरबी की अच्छी योग्यता कर ली जिसने वकालत के दिनों में आपको अपरिमित सहायता दी। सन् १८७३ में आप गवर्नमेंट हाईस्कूल कानपुर में भर्ती हुए और सन् १८७९ में इंट्रेन्स परीक्षा प्रथम श्रेणी में पास की। म्योरसैंट्रल कालिज प्रयाग में आपने उच्च शिक्षा पायी। अपने गुणों के

कारण नेहरू जी कालिज में विद्यार्थियों के सर्वप्रिय और सर्वमान्य नेता थे; कालिज के प्रिंसिपिल मिस्टर हरीसन तो आपके गुणों पर मुग्ध थे। बीमार हो जाने के कारण बी० ए० की परीक्षा में आप न बैठ पाये, अतः आपने वकालत की पढ़ाई प्रारम्भ की और केवल तीन महीने के परिश्रम से सन् १८८२-८३ की 'वकील हाईकोर्ट परीक्षा' ससम्मान सर्वप्रथम पास की।

सन् १८८३ में २२ साल की अल्पावस्था में पं० मोतीलाल जी ने कानपुर में वकालत प्रारम्भ की। पेशे में जूनियर होते हुए भी प्रेक्टिस बहुत अच्छी चल निकला। कानपुर में पं० पृथ्वीनाथ जी से जो उन दिनों वहां के प्रमुख वकील थे आपका बहुत हेल मेल हो गया। आपकी प्रतिभा पर रीझकर पृथ्वीनाथ जी ने आपको हाईकोर्ट में प्रेक्टिस करने की मंत्रणा दी। अस्तु हाईकोर्ट में समुन्नति करने की महात्वाकांक्षा लेकर नेहरू जी सन् १८८६ में प्रयाग आये। प्रयाग आकर आपने अपने बड़े भाई नन्दलाल जी के जूनियर रहकर हाईकोर्ट में प्रेक्टिस प्रारम्भ की। अकस्मात पं० नन्दलाल जी का हैज़े से देहावसान हो गया और सारे कुटुम्ब का भार आप ही के ऊपर आपड़ा। प्रयाग आकर पंडित जी ने बड़ी शीघ्रता से छलांगे मार कर नाम कमाया और मार्के की सफलता पायी। पं० नन्दलाल जी के हाथ के मुक़द्दमे आपने लड़े और उन्हें

वकालत

जीत कर बड़े भाई के मुवक्किलों को अपना बना लिया। सबसे पहले जिस मुकद्दमे के कारण पण्डित जी की शोहरत हुई वह एक प्रयागवाल का था जिस पर सात जुर्म लगाये गये थे। पं० जी ने उसे सातों अभियोगों से बरी करा दिया। जज महोदय ने फ़ैसले में लिखा था, "इस मुक़द्दमे में अभियुक्त को बचाने का सारा श्रेय पंडित मोतीलाल जी को है। किसी भी अभियुक्त का जिस पर सात-सात अभियोग लगाये गये हों सभी अभियोगों से बरी हो जाना बड़ा कठिन है। इस अभियुक्त को बरी कराना पं० मोतीलाल जी ऐसे वकील का ही काम है। नेहरू जी ने जिस विद्वत्ता और खोज से अभियुक्त के पक्ष का समर्थन किया और उसकी पैरवी की वह सर्वथा प्रशंसनीय है"। इसके पश्चात तो आपकी तारीफ़ों का पुल बंध गया, अंग्रेज़ी के प्रमुख पत्रों ने आपके पाण्डित्य और बुद्धि-प्रखरता की चर्चा की और जजों ने आपकी योग्यता को मुक्तकंठ से सराहा। बहुत शीघ्र ही आप तत्कालीन चीफ़ जस्टिस सर जोन एज के कृपाभाजन बन गये। जब सन् १८९६ में हाईकोर्ट के जजों को पहली बार वकीलों में से एडवोकेट बनाने का अधिकार मिला तो जिन चार वकीलों को यह सम्मान प्रदान किया गया था उनमें आप ही सब से अल्पवयस्क थे। उस समय आपके ऐडवोकेट बनाये जाने पर समाचार पत्रों में बहुत कुछ टीका टिप्पणी और आलोचना हुई थी। इस समय के बाद आपने

विजय पर विजय पायी और हाईकोर्ट के सर्वोच्च वकील माने जाने लगे। सन् १९२१ तक पंडित जी वकील हाईकोर्ट ऐसोसियेशन के सभापति रहे। सन् २१ में मातृभूमि की पुकार पर पं० जी ने वकालत छोड़ दी और तब से मृत्युपर्यन्त लग कर प्रैक्टिस नहीं की। वकालत छोड़ते समय प्रतिज्ञाबद्ध होने के कारण आपने एक मुक़द्दमा अपने पास रहने दिया था। यह लखना राज केस आपने प्रिवी कौंसिल तक लड़ा और अपने मुवक्किल को जिताया। मिस्टर ग्रिमवुड मियर्स चीफ़ जस्टिस प्रयाग हाईकोर्ट ने आपकी मृत्यु के बाद वकीलों की सभा में बोलते हुए कहा था, "आप में से बहुत सों को इटावा के मुक़द्दमे में उनकी अद्भुत पैरवी याद होगी जिसमें उन्होंने रानी किशोरी की पैरवी की थी। सारे संसार का कोई वकील उस मुक़द्दमे को पं० मोतीलाल जी से ज़्यादा अच्छा नहीं लड़ सकता था"। असहयोग के बाद आप 'चेम्बर-प्रैक्टिस' करने लगे और सन् ३० के सत्याग्रह संग्राम तक कुछ न कुछ समय इस ओर देते रहे। यद्यपि आप इलाहाबाद हाईकोर्ट के वकील थे किन्तु अवध के ताल्लुक़ेदारों के गद्दी मिलने सम्बन्धी क़ानूनों का आपने पूर्ण अध्ययन किया था और पिछले २५ साल से आपकी वकालत की इतनी ही मांग अवध में रहती थी जितनी आगरा प्रान्त में। जब १९२८ के अगस्त महीने में आप सर सप्रू के साथ 'सर्व पार्टी' की

पैरवी करने के लिये पटना गये थे तो अदालत और वकील-वर्ग दोनों ही आपकी पैरवी का ढंग देखकर स्तम्भित थे। सन् २६ में जब आप कायस्थ पाठशाला और सर हुकुमचन्द के मुक़द्दमों की क्रमशः बनारस और इन्दौर में पैरवी करने गये थे तो विस्मित दर्शकों का अदालत में मेला लगा रहता था। पिछली वर्ष तक पंडित जी ने वकालत में अपने उन्नत स्थान को क़ायम रखा जब कि दरभंगा के महाराजा ने आपको अपने आगरेवाले मुक़द्दमे में ख़ास तौर पर वकील किया था। आपने सत्याग्रह संग्राम के दिनों में कांग्रेस कार्यकारिणी से अनुमति लेकर इस मुक़द्दमे को लड़ा और सारी आमदनी का तीन चौथाई भाग कांग्रेस महासभा को दिया। प्रयाग हाईकोर्ट के सुप्रसिद्ध वकील और भूतपूर्व जज मिस्टर इक़बाल अहमद ने आपके वकालत सम्बन्धी चमत्कार का वर्णन करते हुए कहा था, "माई लार्ड, बिना अतिशयोक्ति के मैं यह कह सकता हूं कि अपने सारे जीवन में मैंने उनसे बड़ा एडवोकेट और अद्भुत वकील नहीं देखा। वास्तव में वे वकील पेशे के जिस थे। उन्हीं के समान पुरुष पेशे के सन्मान और पद का उत्थान करते हैं"।

हाईकोर्ट में आने के बाद ही नेहरू जी कांग्रेस में दिलचस्पी लेने लगे और सन् १८८८ ई० में जब कि कांग्रेस महासभा का चौथा अधिवेशन प्रयाग में मिस्टर जार्ज यूल के सभापतित्व

में हुआ आप स्पष्टरूपेण शामिल होगये।

कांग्रेस सम्पर्क

जब सन् १८९२ में कांग्रेस महासभा का अधिवेशन द्वितीय बार प्रयाग में हुआ तो पं० मोतीलाल जी स्वागत कारिणी समिति के एक पदाधिकारी थे। इस समय से पंडित जी बराबर कांग्रेस से संम्बधित रहे और प्रायः सभी अधिवेशनों में शामिल हुए। सन् १९०३ में बालक जवाहरलाल को साथ लेकर आप बम्बई कांग्रेस में गए थे जिसके सभापति सर हेनरी काटन थे। इसी समय से गरम और नरम दल का मतभेद अंकुरित होना प्रारम्भ हुआ; पं० जी सोलह आना नरम दल में थे। सन् १९०५ में आप जवाहरलाल जी को हैरो में भर्ती कराने सपत्नीक इंग्लैंड गये और विदेश यात्रा से लौट कर १९०६ में कलकत्ता कांग्रेस में शामिल हुए। कलकत्ता में कांग्रेस में मतभेद के प्रत्यक्ष लक्षण उपस्थित थे। स्वर्गीय लोकमान्य तिलक और श्री विपिनचन्द्र पाल तथा तपस्वी अरविन्द घोष के नेतृत्व में उग्र दल नरम दल वालों के हाथ से कांग्रेस सत्ता छीन लेने के लिये कटिबद्ध था। बंग भंग ने वायुमंडल भी उग्र दल के पक्ष में कर दिया था। एक मुख्य प्रस्ताव पर नरम दल वालों की हार, पं० मदन मोहन मालवीय और पं० मोतीलाल नेहरू के नेतृत्व में संयुक्तप्रान्त की ठोस सहायता से ही, बाल बाल बची। मोतीलाल जी उस

समय माडरेट थे और यही उनको होना भी चाहिये था। उनकी संस्कृति, शिक्षा, और व्यवसाय ने उन्हें गम्भीर विचारक, तार्किक, और माडरेट बना दिया था। सन् १६०७ में संयुक्त प्रान्तीय कान्फ्रेन्स का प्रथम अधिवेशन प्रयाग में हुआ और आप ही उसके सभापति बनाये गये। उस समय ब्रिटिश न्यायप्रियता में आपको अगाध विश्वास था और आज्ञा-भंग, बायकाट आदि विनाशकारी उपायों से चिढ़ थी। इन्हीं विचारों से ओतप्रोत आपका भाषण गरमदल वालों को बहुत निराशाजनक लगा था।

सन् १६०६ में 'लीडर' स्थापित हुआ और आप ही उसके प्रथम मैनेजिंग चेयरमैन बनाये गये। 'लीडर' के आप हिस्सेदार भी थे और उसके हिताहित का आपको बहुत ध्यान था।

लीडर

सन् १० में जब कि समाचार पत्रों का मुंह बन्द कर देने पर सरकार तुली हुई थी, भारतीय प्रेस की स्वतंत्रता पर बातचीत करते हुए आपने एक बार कहा था, "जब तक मेरे मकान में एक भी ईंट के ऊपर ईंट खड़ी रहेगी तब तक मैं लीडर के स्वतंत्रता के लिये लड़ने के अधिकार की रक्षा करूंगा"। यह वाक्य पंडित जी के ही स्वाभिमान के योग्य है। कालान्तर में विचार विरोध होने के कारण आप 'लीडर' से प्रथक होगये।

सन् १६०६ ई० में मोर्ले मिन्टो सुधार स्कीम का श्रीगणेश

हुआ और पंडित जी प्रान्तीय लैजिस्लेटिव कौंसिल के सदस्य हो गये। कौंसिल में सदा आपने स्वतंत्र रूपेण सरकार के कार्यों की आलोचना की। सन् १७ में नेहरू जी ने रुड़की कालिज के प्रिंसिपिल के भारतीयों के प्रति किये गये घृणित व्यवहार की निन्दा का प्रस्ताव पेश किया। परिस्थिति की सरगरमी से घबड़ा कर सर जेम्स मेस्टन ने आपको उत्तर देने का अधिकार नहीं दिया। पं० जी अपने मौलिक अधिकारों का इस प्रकार ख़ून होते न देख सके और विरोध में कौंसिल भवन छोड़कर चले आये और गवर्नर तथा सर सुन्दरलाल के बहुत मनाने पर कौंसिल को वापिस गये। आप मान्टेग्यू चेम्सफ़ोर्ड सुधार योजना के दिनों तक कौंसिल के मेम्बर रहे। सन् १९१४ में पंडित जी ने म्युनिसिपिल बोर्ड में निर्वाचित होकर तीन वर्ष भर प्रयाग नगर की सेवा की।

कौंसिल और म्युनिसिपेलिटी

सन् १९१४ में यूरोपीय महासमर छिड़ा और सरकार ने सभी भारतीयों से सहायता की याचना की। पं० मोतीलाल जी इस कार्य में भी पीछे न रहे और महात्मा गांधी की नाईं इङ्गलैंड को इस विपत्काल में भरसक सहायता देने का प्रयत्न किया। प्रान्तीय प्रकाशन विभाग के सदस्य रहे और युक्तप्रान्त में इण्डियन डिफेन्स फ़ोर्स का संगठन किया। सारा

होमरूल लीग

संसार इस समय महासमर में संलग्न था और राष्ट्रों का भाग्य तराजू में लटक रहा था। इसी घटनात्मक अवसर पर देवी एनी बेसेंट ने भारत के आत्म निर्णय और स्वराज के अधिकार का दावा करने के लिये अपना सुप्रसिद्ध होमरूल आन्दोलन आंधी पानी की नाईं प्रारम्भ कर दिया। प्रयाग में भी इसकी एक शाखा खुली और पं० मोतीलाल जी उसके सभापति बनाये गये। सर सप्रू, श्री चिन्तामणि और पं० जवाहरलाल जी भी इसके सदस्य थे। पंडित जी के नेतृत्व के कारण प्रयाग में होमरूल लीग ने बड़ा ज़ोर बांधा। 'पायो-नियर' ने आपके इस उत्साह पर व्यंग्य करते हुए आपको होमरूल लीग का ब्रिगेडियर जनरल लिखा था। लीग का प्रचार देखकर सरकार घबड़ा गयी और प्रजातंत्र और स्व-तंत्रता की दुहाई देना भूल कर दमन पर उतर आयी। आन्दो-की प्रमुख नेत्री देवी बेसेंट अपने साथी मैसर्स अरंडेल और वाडिया के साथ नज़रक़ैद कर दी गयीं। देश भर में इस अन्याय के प्रति क्रोध और घृणा प्रकट की गयी। पं० मोतीलाल जी के राजनैतिक विचारों पर इस घटना का बहुत प्रभाव पड़ा और भारतीय नौकरशाही के प्रति आपका विश्वास टूट गया। जेल से छूट कर देवी बेसेंट प्रयाग आयीं और पं० जी की अतिथि रहीं। इस घटना के कुछ ही महीनों बाद सन् १९१७ में स्पेशल प्रान्तीय कान्फ्रेन्स लखनऊ में होना निश्चित हुयी

और लीग के ब्रिगेडियर जनरल ही सभापति मनोनीत हुए। अपने भाषण में नेहरू जी ने स्पष्ट शब्दों में नौकरशाही की दमन नीति की तीव्र आलोचना करते हुए ब्रिटिश जनता में विश्वास रखने की अपील की थी। नौकरशाही की नेकनीयती में उन्हें तनिक भी विश्वास शेष नहीं रह गया था।

सरकार की विरोधी नीति के कारण पंडित जी के विचारों में महान परिवर्तन हो रहा था और आप 'लीडर' को भी अपने सामंजस्य में लाना चाहते थे। ऐसा होना सम्भव न देख कर मोतीलाल जी ने 'लीडर' से अपना सम्बन्ध तोड़ दिया और राजा महमूदाबाद के सहयोग से सुप्रसिद्ध 'इन्डिपेन्डेन्ट' पत्र निकाला। पत्र को अपनी उग्रनीति के कारण सरकार की कोप दृष्टि का सामना लगातार करना पड़ा। प्रेस ज़ब्त होने पर बहुत दिनों तक हस्तलिखित निकलता रहा, अंत में सन् २१ में पिता-पुत्र के जेल यात्री होने पर स्थगित हो गया।

इन्डिपेन्डेन्ट

सन् १९१८ में महासमर का अंत हुआ और इंग्लैंड विजयी हुआ। युद्ध से अवकाश पाकर नौकरशाही ने अनन्य सेवाओं के पुरस्कार में भारत की राष्ट्रीय भावनाओं को कुचल डालने की ठान ली। लड़ाई के दिनों में पंजाब और बंगाल में षड्यन्त्र और क्रांति की चेष्टाएं हुई थीं और सरकार इन विप्लव-वादियों

पंजाब-हत्याकांड और अमृतसर कांग्रेस

को मसल डालने के लिये अवसर ढूंढ रही थी। जिस भारत-रक्षा क़ानून के पंजे में जकड़ कर युद्धकाल में बहुत से देश भक्तों को सरकार जेल में ठूंस चुकी थी उसकी अवधि समाप्त हो रही थी। अतः बदनाम रौलट एक्ट, 'काला क़ानून' सार्वजनिक तीव्र विरोध की उपस्थिति में पास किया गया और बिना मुक़द्दमे के जेल में ठूंस देना न्याययुक्त हो गया। महात्मा गांधी ने इस काले क़ानून के विरुद्ध सत्याग्रह करने की घोषणा की। सारे देश में भीषण आन्दोलन उठ खड़ा हुआ। पंजाब में आन्दोलन ने प्रचंड रूप धारण किया। कई स्थानों पर सरकार ने शान्ति के नाम पर गोलियां चलायीं और जनता ने उन्मत्त होकर प्रतिहिंसा करने की चेष्टा की। महात्मा गांधी को जनता के इस उन्माद पर अपार दुःख हुआ। परिस्थिति भीषण देख कर गवर्नर ने पंजाब भर में मार्शल ला की घोषणा कर दी। ता:१३ अप्रेल सन् १९१९ को मार्शल ला के विरोध में एकत्रित शान्त जनता पर जलियांवाले बाग़ में जनरल डायर ने गोलियां बरसायीं और एक के बाद दूसरे शहरों में यही पाशवी ताण्डव हुआ। पंजाब के बहुतेरे राष्ट्रीय नेताओं को फांसी या देशनिकाला दे दिया गया। इस क्रूर अत्याचार का देश के सभी गरम और नरम नेताओं ने तीव्र विरोध किया। पं० मोतीलाल जी ने प्रयाग की एक सार्वजनिक सभा में भाषण देते हुए इङ्गलैंड को

चेतावनी दी कि कोई भी शासन सुधार भारत को स्वीकार न होगा जब तक राजनैतिक बंदी नहीं छोड़े जाते और जलियां वाले बाग़ कांड की जांच नहीं होती। सरकार ने दोनों शर्तें मान लीं, राजबन्दी छोड़दिये गये और हन्टर कमेटी की नियुक्ति हुई। हन्टर कमेटी की जांच में ढील ढाल देख कर अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी ने पं० मोतीलाल जी के सभापतित्व में पंजाब जांच कमेटी की नियुक्ति की। ऐसे उद्विग्न और अस्थिर वायुमंडल में सन् १९१९ के दिसम्बर महीने में कांग्रेस महा-सभा का अधिवेशन अमृतसर में हुआ और नेहरू जी ही राष्ट्रीय महासभा के कर्णधार बनाये गये। यद्यपि कांग्रेस ने मांटेग्यू चेम्सफ़ोर्ड सुधारों को 'नाकाफ़ी, असन्तोष-प्रद, और निराशाजनक' समझा, तथापि सुधारों में सहयोग करना निश्चय किया। सरकार के उपरोक्त व्यवहार के कारण कार्यवाही नरम भावों से ओतप्रोत रही। किन्तु यह नरमी टिकाऊ न हो सकी।

असहयोग

हंटर कमेटी और कांग्रेस जांच कमेटी के वक्तव्य प्रकाशित हुए और हंटर कमेटी के ढंग से राष्ट्रीय नेताओं को सन्तोष नहीं हुआ। दूसरी ओर ब्रिटिश जनता के एक अंग ने डायर के 'अद्भुत अत्याचार' के गुणगान करके और हन्टर कमेटी की निन्दा की पूर्ति के लिये उसे तीन लाख रुपया भेंट करके,

जलती हुई विरोधाग्नि में घी का काम किया। महात्मा गांधी को दृढ़ विश्वास होगया कि सुधारों के होते हुए भी 'शैतानी' सरकार का हृदय परिवर्तन नहीं हुआ है। फलतः उन्होंने अपना सुप्रसिद्ध असहयोग कार्यक्रम देश और जनता के सामने रखा। पंजाब के अत्याचारों की करुण गाथाओं का स्वयमेव प्रयत्नपूर्वक ज्ञान प्राप्त करके नेहरू जी स्वच्छंद विदेशी सत्ता के प्रबल शत्रु बन गये। अंग्रेज़ों के एक प्रबल समुदाय की पाशवी भावनाएं देख कर उनका ब्रिटिश जनता में रहा सहा विश्वास एकदम टूट गया। दूसरी ओर महात्मा गांधी के सत्संग ने उनके भीतर त्याग और सरल जीवन की भावनाएं जाग्रत कीं और वे इस नव जीवन की ओर आकर्षित होने लगे। तीसरी ओर पं० जवाहरलाल ने पिता के पहले अपने को महात्मा गांधी के पक्ष में घोषित कर दिया। यह तीनों कारण उन्हें असहयोग की ओर खींच रहे थे किन्तु इन भावनाओं के विरोध में था उनका नैसर्गिक माडरेटपन तथा राजसी रहन सहन और विशाल आय का प्रलोभन। प्रारम्भ से ही बायकाट और अवज्ञा आदि नाशकारी उपायों के आप विरोधी थे और असहयोग प्रोग्राम की सफलता में आपको सन्देह था। अतः कलकत्ता कांग्रेस के विशेष अधिवेशन में नेहरू जी ने दास बाबू के साथ महात्मा जी के असहयोग सम्बन्धी प्रस्ताव का तीव्र विरोध किया और

विपिनचन्द्र पाल की तरमीम का समर्थन किया। प्रबल विरोध के रहते हुए भी कांग्रेस ने बहुमत से महात्मा जी का कार्यक्रम स्वीकार कर लिया। दिसम्बर में कांग्रेस महासभा का अधिवेशन नागपुर में हुआ और दास बाबू तथा नेहरू जी महात्मा जी का विरोध करने के लिये सदलबल नागपुर पहुँचे। महासभा की बैठक के ठीक पहले अभूतपूर्व घटना घटी और सारे भारत को आश्चर्य चकित करते हुए पं० मोतीलाल जी और दास बाबू स्पष्टरूपेण असहयोगी हो गये। देशप्रेम, देवत्व और पुत्रस्नेह की अभूतपूर्व विजय हुयी।

पंडित जी के लिये असहयोग स्वीकार करने का अर्थ था अपनी जीवनचर्या में महान क्रान्ति। इसका अर्थ था विलास और ऐश्वर्यमय जीवन को छोड़कर स्वेच्छापूर्वक आत्मसंयम, त्याग, और सेवा का व्रत लेना। वह दिन थे कि जब आनन्द भवन में नित्य ही यूरोपियन और भारतीय अतिथियों को शाही दावतें दी जाती थीं; राजे, महाराजे, लाट और गवर्नर सभी आपकी मेज़ पर भोज खाते थे। वह दिन थे कि जब आनन्द भवन में शराब खुल कर ढला करती थी और सन्त निहालसिंह के स्वयं अनुभव से, "आनन्द भवन का शराब स्टाक यूरोप के बहुत से प्रसिद्ध मैख़ानों से अच्छा था"। वह दिन थे कि जब पंडित जी फ़ैशन के अगुआ थे

महान त्याग

और आपके कपड़े लंदन में सिलते और पेरिस में धुलते थे, परियों की कहानियों के परियों के राजा का सा आपका रहन सहन था, वकालत के सातवें आसमान में आप पहुँच चुके थे और हज़ारहों रुपये मासिक की आय थी। असहयोग का अर्थ था इस सारी बनी बनायी इमारत को ढहा देना, इस लड़कपन से खेले हुए खेल को बिगाड़ देना और अनभिज्ञ नीरस जीवनक्षेत्र में पदार्पण करना। किन्तु पं० जी ने अच्छी तरह फलाफल सोचकर ही निर्णय किया था। नागपुर से लौटते ही आपने वकालत से त्याग पत्र दे दिया और आनन्द भवन की रंगरेलियों का रूप पलट दिया। विदेशी वस्त्रों की अलमारियों की आलमारियां अग्निदेव को सौंप दीं गयीं और पंडित जी पुत्र और परिवार समेत खम्भ ठोंक कर विदेशी सत्ता से भिड़ने के लिये संग्राम में उतर आये। अपने इस परिवर्तन का चरित्रचित्रण स्वयं पं० जी ने सन् १९२१ की जून या जुलाई में रामगढ़ से महात्मा जी को लिखे गये पत्र में इस प्रकार किया था, "आप यह जानकर प्रसन्न होंगे कि मैं यहां किस प्रकार का जीवन व्यतीत कर रहा हूं। उन दिनों मेरे साथ पहाड़ पर दो रसोई भंडार आया करते थे—एक अंग्रेज़ी और दूसरा हिन्दुस्तानी। ख़ेमे में छोटी हाज़िरी खाकर रायफ़लें, पिस्तौलें और गोली बारूद से अच्छी तरह सुसज्जित होकर जंगल के लिये चल देता था, कभी कभी शिकारियों की एक छोटी

सी फ़ौज भी साथ ले जाता था, और सामने पड़ने वाले निर्दोष जानवरों को संध्याकाल तक मारता था। इस बीच में 'लंच' और चाय जंगल ही में घर की सी ही सजधज और सावधानी से परोसी जाती थी। चित्ताकर्षक व्यालू हम लोगों के ख़ेमे को लौटने की प्रतीक्षा करती हुई मिलती थी और इसके साथ पूरा न्याय करके हम लोग न्यायी ! की नींद सोते थे। जीवन के सम पथ में कोई भंग नहीं पड़ता था। हां एक बेवकूफ़ लड़की के ऊपर जो जब तब कुछ ग़रीब जानवरों के प्राणों की रक्षा कर देती थी, चिढ़ अवश्य होती थी। और अब—पीतल के कुकर ने (जिसे दिल्ली में उस समय ख़रीदा था जब कि हम लोग सभी तिब्बी कालिज की स्थापना के लिये वहां थे) दो रसोई घरों का स्थान ले लिया है, पुराने नौकरों के फ़ौज फांटे के स्थान पर केवल एक नौकर है और वह भी विशेष समझदार नहीं है—गाड़ियों भरी भोजन सामग्री के स्थान पर तीन छोटे थैले हैं जिनमें दाल, चावल और मसाला है (इन थैलों को कमला ने खादी के स्थान पर विदेशी कपड़ों का बना दिया है और इसके लिये मैं उसे कभी क्षमा नहीं करूंगा)। अंग्रेज़ी ठाठबाट की कलेवा, लन्च, और व्यालू, बहुत से फल, सबेरे और शाम की चाय और जब तब मिल जाने पर दो एक अंडे—इन सब के स्थान पर अब केवल एक ही बार दोपहर में भोजन होता है जिसमें दाल, चावल, साग और कभी कभी

खीर (एक साथ पका हुआ दूध और चावल) रहती है। शिकार का स्थान टहलने ने ले लिया है और रायफल और बन्दूकों का पुस्तकों, पत्रिकाओं, और समाचार पत्रों ने (एडविन अर्नाल्ड की 'पवित्र गान' पुस्तक मुझे प्रिय है और उसको तीसरी बार पढ़ रहा हूं)। जब ज़ोर का पानी बरसता है, जैसा इस समय बरस रहा है, तो बेवकूफ़ी से भरे पत्र लिखने के अतिरिक्त और कुछ नहीं रहता, "मेरे देशवासियों कैसा पतन है", किन्तु वास्तव में मैंने जीवन में अब से ज्यादा आनन्द कभी नहीं पाया। केवल चावल चुक गया है और मैंने ब्राह्मण की नाईं जगतनारायण (जो यहां मेरे पास ही हैं) के मिनिस्टी-रियल भंडार से भिक्षा की याचना की है।

देश सेवा के लिये उस अवस्था में पं० जी ने राजसी सुखों को ठुकराकर फ़कीरी ली जब दूसरे सुख और शान्ति खोजते हैं और सारे देश को असहयोगी बनाने के कार्य में जुट गये। आपके महान त्याग के कारण जनता

रण-प्रांगण में

ने आपको 'त्यागमूर्ति' की उपाधि से विभूषित किया और आपके आदर्शों से प्रोत्साहित होकर सैकड़ों वकीलों ने वकालत छोड़ी, सरकारी नौकरों ने नौकरियां छोड़ीं और विद्यार्थियों ने सरकारी स्कूल छोड़े। आपका नेतृत्व पाकर असहयोग ने युक्त प्रान्त में बड़ा ज़ोर बांधा। इसी अवसर पर युवराज 'प्रिंस आफ़ वेल्स' का

भारत में आगमन हुआ। देश विदेशी सरकार से पूर्णतया असहयोग कर रहा था, अस्तु युवराज का भी बहिष्कार होना अवश्यम्भावी था। ता: १६ नवम्बर के दिन युवराज ने भारत-भूमि पर पैर रखा और उस दिन कांग्रेस के आदेशानुसार सारे देश में हड़ताल मनायी गयी। सरकार महासभा के इस अद्भुत प्रभाव को देख कर कांप गयी और उसने कांग्रेस के संगठन को मटियामेट करने की ठान ली। बंगाल, युक्त प्रान्त, पञ्जाब और आसाम में वालंटियर कोर ग़ैरक़ानूनी क़रार दे दी गयी। इसके प्रतिवाद स्वरूप कांग्रेस कार्यकारिणी ने यह निश्चय किया कि प्रत्येक कांग्रेस कमेटी अपना वालंटियर कोर संगठित करे और प्रत्येक कांग्रेसमैन इस कोर में नाम लिखावे। पं० मोतीलाल जी सबसे पहले सपरिवार वालन्टियर बन गये और फल स्वरूप ता: ६ दिसम्बर को, इकलौते बेटे, भतीजों और सहयोगियों के साथ प्रथम बार गिरफ़ार कर लिये गये। नेहरू जी हंसते हंसते जेल गये और बन्दीगृह की यातानाओं को पुष्पवत माना। पंडित जी की गिरफ़ारी के कुछ दिनों बाद ही गोलमेज़ की बातचीत चली थी तो इसलिये कि कहीं महात्मा जी आपकी यातनाओं का ध्यान करके झुक न जावें, आपने महात्मा जी को पहली ही मांगों पर अड़े रहने के लिये लिखा था। ९ जून सन् ३१ को नेहरू जी जेल से छूटे। यद्यपि पंडित जी का स्वास्थ्य बहुत गिर गया था, फिर भी आते ही

आपने अपने महासभा के महामंत्रित्व का भार ले लिया और कांग्रेस कार्य में जुट गये।

नेहरू जी के जेल से छूटने के पहले ही चौराचौरीकाण्ड के फलस्वरूप सत्याग्रह आन्दोलन शिथिल हो चुका था, महात्मा जी बन्दीगृह पहुंच चुके थे और आन्दोलन उचित नेतृत्व की कमी के कारण शिथिल पड़ गया था।

स्वराज-पार्टी

६ जून को पं० जी रिहा हुये और ७ जून को लखनऊ में आल इन्डिया कांग्रेस कमेटी की बैठक हुयी। कमेटी ने एक प्रस्ताव द्वारा पं० मोतीलाल जी के सभापतित्व में सविनय अवज्ञा जांच कमेटी की नियुक्ति की जिसका काम सविनय अवज्ञा के लिये देश की तैयारी और कांग्रेस के रचनात्मक प्रोग्राम की जांच और रिपोर्ट करना था। कमेटी ने सारे देश में दौड़ा किया और परिस्थिति समझ लेने के बाद यह निर्णय किया कि देश सामूहिक सविनय अवज्ञा के लिये तयार नहीं है और कांग्रेस को सरकार के संचालन में रोड़ा लगाने की दृष्टि से कौंसिलों पर अधिकार करना चाहिये। इन सिफ़ारिशों ने कांग्रेस कैम्प में भीषण मतभेद पैदा कर दिया। महासभा में परिवर्तन वादी और अपरिवर्तन वादी दो दल हो गये। दिसम्बर सन् २२ में दास बाबू के सभापतित्व में कांग्रेस महासभा का अधिवेशन गया में हुआ। सविनय अवज्ञा जांच कमेटी की रिपोर्ट विषय-

निर्धारिणी समिति ने अस्वीकार कर दी और महासभा में केवल एक तरमीम शुदा प्रस्ताव ही उपस्थित किया जासका। महासभा ने इस प्रस्ताव को भी न माना और कौंसिलों का पूर्ण बायकाट निश्चय किया। इस पर दास बाबू ने त्यागपत्र दे दिया और पं० मोतीलाल जी, हकीम अजमल खां और श्री विट्ठल भाई पटेल के सहयोग से 'कांग्रेस खिलाफत स्वराज्य संघ' का निर्माण किया जो बाद में 'स्वराज पार्टी' के नाम से प्रसिद्ध हुआ। दोनों दलों के संघर्ष को शान्त करने का कई बार प्रयत्न किया गया किन्तु असफल रहा। अंत में इस भीषण परिस्थिति पर विचार करने के लिये दिल्ली में महासभा का विशेष अधिवेशन बुलाया गया। लाला लाजपतराय, मौलाना मुहम्मद अली, और डाक्टर किचलू इस समय जेल से छूट आये थे। उन्होंने आकर परिस्थिति सुधारने की दृष्टि से दिल्ली कांग्रेस में स्वराजिस्टों का साथ दिया और फलतः कौंसिल प्रवेश का प्रस्ताव पास हो गया।

चुनाव में स्वराजिस्टों ने आशा से ऊपर सफलता पायी। पं० मोतीलाल जी युक्त प्रान्त के सात शहरों की ओर से बिना विरोध चुने जाकर असेम्बली में सदलबल पहुँचे और असेम्बली स्वराज पार्टी और विरोधी दल के नेता बने। इस पद पर रहकर पंडित जी एक दृढ़ योद्धा, अनन्य संयमी

असेम्बली

और चतुर तथा व्यवहारकुशल राजनीतिज्ञ प्रमाणित हुए। प्रारम्भ में आपने इस बात की चेष्टा की कि सारे चुने हुए सदस्यों का विरोधी दल संगठित करें और जनता के सारे प्रतिनिधि ठोस रूप से सरकार का पद पद पर विरोध करें। आप इस उद्योग में सफल भी हुए, मिस्टर जिन्ना ने अपनी इन्डिपेन्डेन्ट पार्टी के साथ आप का सहयोग किया और सन् २४ का बजट ठुकरा दिया गया। सन् २५ के सितम्बर में आपने सुप्रसिद्ध राष्ट्रीय मांग का प्रस्ताव पेश किया जिसे सरकार ने अस्वीकार कर दिया। सन् २६ के प्रथम अधिवेशन में जब बजट उपस्थित किया गया तो पं० मोतीलाल जी अपना बयान देकर सदल बल विरोधस्वरूप असेम्बली हाल से चले आये। इस समय से यह 'वाक आउट' प्रथा स्वाराजपार्टी की असेम्बली और कौंसिलों में नीति बन गयी। इस नीति ने स्वराज पार्टी में मतभेद उत्पन्न किया और प्रतियोगी सहयोगी प्रथक होगये। इसी समय देश में साम्प्रदायिकता की बाढ़ आ रही थी, बड़े बड़े नेता इस दल दल में आ फंसे थे और अपने को प्रथम भारतीय और अन्त में भारतीय कहने वालों की ओर अंगुलियां उठायी जाती थीं। पं० मोतीलाल जी इस प्रश्न पर बराबर दृढ़ रहे और स्वराजपार्टी की नीति आपने हिन्दू-मुसलिम पक्षपातों से सर्वथा रहित केवल भारतीय ही रखी। इस प्रश्न पर भी आपके बहुत सेसहयोगी आपके विरोधी होगये किन्तु

आपने इसकी चिन्ता नहीं की। सन् १९२६ में सर्वसाधारण चुनाव आया और प्रतियोगी सहायोगियों और हिन्दू सभा वालों ने मिलकर पं० मदनमोहन मालवीय और लाला लाजपतराय जी के नेतृत्व में इन्डिपेन्डेन्ट कांग्रेस पार्टी खड़ी की। कांग्रेस कैम्प में आपस में ही गाली गुत्था होने की नौबत फिर आयी। दोनों दलों ने एक दूसरे के विपरीत भर सक प्रचार किया। कांग्रेस कार्यकर्ता प्रायः स्वराज पार्टी के साथ थे और इन्डिपेन्डेट कांग्रेस पार्टी को बग़ावत का झंडा खड़ा करने वाला समझते थे। महात्मा जी बेलगांव के समझौते में महासभा स्वराजिस्टों को सौंप चुके थे और मोतीलाल जी को 'वकील' बना चुके थे। किन्तु जनता पर पूज्य मालवीय जी और लाला जी जैसे महान व्यक्तियों का प्रभाव पड़ना आवश्यक ही था। फलतः स्वराजपार्टी पहले से कुछ कम किन्तु अन्य पार्टियों से से कहीं विशेष संख्या में असेम्बली में पहुँची और इन्डिपेन्डेन्ट कांग्रेस पार्टी के भी काफ़ी प्रतिनिधि चुनाव में आगये। इस प्रकार इस सार्वजनिक थुक्का फ़ज़ीहत का अन्त हुआ। पंडित जी ही पहले की नाईं स्वाराजपार्टी और विरोधी दल के नेता बनाये गये।

सन् १९२७ में नेहरू जी लखना राज केस की अपील के सम्बन्ध में इंग्लैंड गये। सर जान साइमन को आपने इस केस का वकील किया। इङ्गलैंड से ही, सोवियट रूस की दसवीं

वर्षगांठ में शामिल होने का निमंत्रण पाकर सोवियट सरकार के अतिथि की हैसियत से रूस गये। ८ नवम्बर १९२७

साइमन कमीशन

के दिन, जब कि पंडित जी यूरोप ही में थे, वायसराय ने साइमन कमीशन की नियुक्ति की घोषणा की। कमीशन की नियुक्ति फैल फूट के पंजे में पड़े हुए भारत के लिये अचूक औषधि प्रमाणित हुई। जादू की नाईं बरसों की बिखरी हुईं राष्ट्रीय शक्तियां विरोधी झंडे के नीचे एक साथ आकर खड़ी हो गयीं। इसी समय लार्ड बर्कनहैड ने भारत को कामकाजी शासनविधान बनाने की चिनौती दी और इस चिनौती ने साइमन कमीशन की विरोधाग्नि में घी का काम किया। दिसम्बर में मद्रास कांग्रेस ने एक प्रस्ताव द्वारा साइमन कमीशन का बहिष्कार करना निश्चित किया और दूसरे प्रस्ताव द्वारा कार्यकारिणी को आज्ञा दी कि वह भिन्न भिन्न दलों के प्रतिनिधियों से परामर्श करके मौलिक अधिकारों की घोषणा के आधार पर एक स्वाराजी शासनविधान तैयार करे और मार्च के महीने तक सर्वदल कन्वेन्शन की बैठक दिल्ली में बुलाकर अपने कार्य को उसके सामने उपस्थित करे। महासभा के इन प्रस्तावों को लिबरल-फेडरेशन, हिन्दू सभा, मुसलिम लीग आदि प्रायः भारत की सभी राजनैतिक संस्थाओं ने सहर्ष अंगीकार किया।

सर्वदल सम्मेलन की प्रथम बैठक १२ फ़रवरी से २८

फ़रवरी तक दिल्ली में हुई। इसी बीच में मुसलिमलीग ने ५ शर्त पेश की और किसी भी समझौते पर विचार करने के पहले उन शर्तों को स्वीकार करने की प्रस्ताव किया। दिल्ली के अधिवेशन में सफलता मिलते न देखकर मुसलिम

नेहरू रिपोर्ट

मांगों के अधार पर दो समितियां सिन्ध-विच्छेद और आनु-पातिक प्रतिनिधित्व के प्रश्नों पर विचार करने के लिये नियुक्त की गयीं। मई के महीने में सम्मेलन की दूसरी बैठक बम्बई में हुई। इस बीच में हिन्दू सभा मुसलिम मांगों के विरोध में कई प्रस्ताव पास कर चुकी थी और परिस्थिति पहले से कहीं विशेष उलझ गयी थी, साथ ही नियुक्त समितियों ने भी कोई रिपोर्ट पेश नहीं की थी। अस्तु सम्मेलन ने कुछ भिन्न भिन्न दलों के प्रतिनिधियों की एक कमेटी प्रत्येक प्रकार के मसलों और प्रधानतया शासनविधानात्मक साम्प्रदायिक मसलों पर विचार करने के लिये नियुक्त की और यह कमेटी नेहरू जी के सभापतित्व के कारण नेहरू कमेटी कहलायी। आनन्दभवन में इस कमेटी की दिन प्रति दिन बैठकें हुईं और कई हफ़्तों के अथक परिश्रम के बाद बर्कनहैड की चिनौती के प्रत्युत्तर में नेहरू रिपोर्ट तैयार होगयी। सारे देश ने रिपोर्ट का स्वागत किया और पंडित जी की प्रशंसा की धूम मच गयी। देश और विदेश से आपको बधाई के सन्देश मिले।

अगस्त में यह रिपोर्ट लखनऊ में सर्वदल सम्मेलन के सामने पेश हुई और मुसलिम तथा पूर्णस्वतंत्रता वादियों के विरोध के रहते हुए भी स्वीकृत हुई। कांग्रेस के अवसर पर रिपोर्ट को अंतिम रूप देने के लिये सर्वदल कन्वेशन कलकत्ता में बुलाना निश्चत हुआ।

आपके असाधारण कार्य से रीझकर देशने दुबारा महासभा की बागडोर आपके हाथ में सौंपी और नेहरू जी कलकत्ता कांग्रेस के सभापति मनोनीत हुए। असाधारण विरोध की उपस्थिति में भी पंडित जी विचलित नहीं हुए और अन्त में महात्मागांधी की प्रबल सहायता से नेहरू रिपोर्ट एक साल के लिये स्वीकृत होगयी और पूर्ण स्वाधीनता का प्रस्ताव ३१ दिसम्बर सन् ३१ तक के लिये स्थगित होगया। सर्वदल कन्वेशन को बैठकें भी हुईं किन्तु महासभा के संशयग्रस्त रुख के कारण इसे पूर्ण सफलता न मिल सकी।

कलकत्ता कांग्रेस

नवम्बर सन् २९ में वायसराय ने साइमन कमीशन पर धूल डाल कर गोल मेज़ कान्फ्रेंस की घोषणा की। दिल्ली में सभी दल के नेताओं ने जिनमें महात्मा जी, मोतीलाल जी और जवाहरलाल जी भी थे, वायसराय की घोषणा का स्वागत किया। किन्तु उसी के पीछे अपने प्रिय कुत्ते की मृत्यु के

पूर्णस्वतंत्रतावादी

शोक में लार्ड रसेल ने जो उन दिनों असिस्टेन्ट भारत मंत्री थे, यह कहकर राष्ट्रीय नेताओं के हृदय में सन्देह डाल दिया। फल स्वरूप २३ दिसम्बर को गांधीजी और पं० मोतीलाल जी लाहौर आते हुए वायसराय से स्पष्ट बातें करने के लिये मिले। इस बात-चीत ने सन्देह का दृढ़ बना दिया और महात्मा जी ने लाहौर जाकर पहली जनवरी सन् ३१ की प्रातः पूर्ण स्वाधीनता का प्रस्ताव लाहौर कांग्रेस में पेश किया। इसी कांग्रेस में प्रथम बार एक पिता को अपना मुकुट अपने पुत्र के सिर पर पहनाने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। पंडित जी की राजनैतिक महात्वाकांक्षा की यह परमावधि थी।

लाहौर कांग्रेस के बाद ही पंडितजी ने आलइन्डिया कांग्रेस कमेटी को अपना आनन्दभवन दान किया, कांग्रेस को इससे बड़ा दान और कहीं नहीं मिला। महात्मागांधी जी ने अपनी प्रसिद्ध दांडी यात्रा की और सत्याग्रह संग्राम का 'आज़ादी या मौत' के नारे के साथ श्रीगणेश हुआ। प्रयाग में नमक क़ानून तोड़ने के अपराध में राष्ट्रपति पंडित जवाहरलाल ता: १४ अप्रेल सन् ३० को गिरफ़ार कर लिये गये और सारे देश में सविनय अवज्ञा का आन्दोलन उठ खड़ा हुआ। पं० जवाहरलाल जी का कांटों का ताज महात्मा जी के आदेशानुसार आप ही ने पहना और इतिहास में अमर रहने वाले

सत्याग्रह संग्राम

सत्याग्रह संग्राम के कर्णधार बने। पंडित जी ने नमक क़ानून की बुरी तरह छीछालेदर की। जवाहरलाल जी की गिरफ़्तारी के बाद प्रयाग की एक महती सभा में नमक की भट्ठी में लकड़ी लगा कर आपने कहा था कि जवाहरलाल पर नमक की भट्ठी में लकड़ी लगाने का अपराध लगाया गया है, मैं भी आज सरेदस्त नमक की भट्ठी में लकड़ी लगाता हूं और नौकरशाही को चिनौती देता हूं कि वह मुझे गिरफ़्तार करे। इस चिनौती पर भी पंडित जी को किसी ने हाथ नहीं लगाया। उन दिनों नमक बनवाने की ऐसी धुन लगी थी कि आप आनन्दभवन के सामने सड़क पर दिन में चार चार बार नमक बनवाते थे और प्रयाग की गली दर गली नमक बनता था। प्रयाग ही में क्यों देश के प्रत्येक नगर और प्रत्येक गांव में नमक क़ानून का यही हाल था। जब नमक क़ानून पर गिरफ़्तारियां बन्द हो गयीं तो आपने धूम धाम के साथ नमक क़ानून की दाहक्रिया का उत्सव मनाया और सारे देश ने इसी का अनुकरण किया।

इसके बाद आपने स्वदेशी वस्त्र बहिष्कार के काम की ओर ध्यान दिया। यह कहना अतिशयोक्ति न होगी कि इस कार्य की सफलता का पं० जी को ही सब से बड़ा श्रेय है। इस कार्य में आप की सबसे बड़ी कृति है मिल मालिकों के साथ समझौता। इस समझौते के अनुसार मिलमालिकों ने देशी सूत व्यवहार करने, प्रायः देशी पूंजी और देशी प्रबन्ध

से मिल चलाने की प्रतिज्ञा की और फल स्वरूप उन्हें कांग्रेस ने स्वदेशी होने का प्रमाण पत्र दे दिया। जिन मिलों ने यह शर्तें स्वीकार नहीं कीं उनका बायकाट कर दिया गया और फलस्वरूप आज अधिकांश मिलें उसी समझौते के भीतर हैं। विलायती कपड़े बंधा देने और मुहरबन्द करा देने के प्रश्न पर भी आप दृढ़ रहे। जहाँ मालवीय जी आर्डर स्थगित कराने में लगे हुये थे, वहाँ नेहरू जी को मुहरबन्दी की चिन्ता थी। फल यह हुआ कि सारे देश का विलायती कपड़ा बंध गया, जो काम एक दिन अनुभव के बाहर दिखाई देता था वह पंडित जी की दृढ़ता से सरल हो गया।

इन्हीं दिनों सत्याग्रहियों के साथ पुलिस और फ़ौज के दुर्व्यवहार की रिपोर्टें आ रही थीं, धरसाना की डंडामारी और शोलापुर के भीषण अत्याचार सामने थे। इस कारण कांग्रेस कार्यकारिणी ने एक प्रस्ताव पास करके हिन्दुस्तानी पुलिस और फ़ौज से भारतीय होने के नाते देश के प्रति अपना कर्तव्य पालन करने की अपील की। सरकार यह न सह सकी और उसे इस कार्य में फ़ौज और पुलिस को विद्रोह के लिये उकसाने की गन्ध आयी। फल स्वरूप कांग्रेस कार्यकारिणी ग़ैर क़ानूनी संस्था क़रार दे दी गयी और राष्ट्रपति पं० मोतीलाल जी तथा महामंत्री डाक्टर सैयद महमूद गिरफ़्तार कर लिये गये। आपको ६ महीने का

सादा कारावास दंड पुरस्कार में मिला।

इसी बीच में सर सप्रू और श्री जयकर समझौते के उद्देश्य से वायसराय से बातचीत करने के बाद महात्मा जी से यरवदा जेल में मिले। गांधी जी ने नेहरू-द्वय से परामर्श करना आवश्यक समझा, अतः आप यरवदा जेल ले जाये गये। जो हो, इस बात चीत से अन्त में समझौता न होसका। जिस समय पंडित जी यरवदा गये थे उसी समय आपको थूंक में खून आने लगा था और दमा का पुराना रोग उखड़ आया था। अस्तु बीमारी के उग्ररूप धारण करने पर आप बीच ही में जेल से छोड़ दिये गये। यद्यपि आपकी बीमारी दिन पर दिन संगीन होती जाती थी फिर भी आप देश सेवा से अपने को अलग न रख सके। बम्बई जाकर विदेशी वस्त्र व्यौपारियों को ठीक किया, कलकत्ते जाकर सुभाष-सेनगुप्त दलों को मिलाकर बंगाल के सोते हुए सिंह को जगाया, प्रयाग में रहकर करबन्दी के आन्दोलन का नेतृत्व किया। इन तीनों स्थानों में आप इलाज की दृष्टि से अच्छे से अच्छे डाक्टरों की मातहती में थे और आन्दोलन से प्रथक रहने की आपको कड़ी से कड़ी हिदायत थी फिर भी आपका अनन्य देश प्रेम आपको पलभर के लिये भी स्वराज्य संग्राम से अलग न रहने देता था। कलकत्ते में एक्सरे परीक्षा होने के बाद आपने दक्षिणेश्वर में कविराज वाचस्पति का इलाज कराया। इसी

समय कमला जी गिरफ़्तार हुईं और आप घर के लिये चल पड़े। प्रयाग आकर आपकी दशा गिरती ही गयी। इस मरणासन्न दशा में भी पं० जी ने इतिहास में स्वर्णाक्षरों में लिखा जाने योग्य एक कार्य और अंतिम कार्य किया। गोलमेज़ की समाप्ति पर प्रधान मंत्री की स्वराज्य सम्बन्धी घोषणा हुई। उस समय कांग्रेस कार्यकारिणी ग़ैर क़ानूनी जमात थी और इसकी बैठक बुलाने का अर्थ था गिरफ़्तारी। किन्तु पं० जी ने दूरदर्शिता से काम लेकर प्रधान मंत्री के वक्तव्य पर विचार करने के लिये बैठक बुलायी और इस बैठक ने भारत की राजनीति का पलड़ा ही पलट दिया। यद्यपि सर सप्रू के तार पर बैठक की कार्यवाही प्रकाशित नहीं की गयी किन्तु आज यह बात प्रकाशित हो चुकी है कि कार्यकारिणी का निश्चय क्या था। पंडित जी के प्रस्ताव पर कांग्रेस कार्यकारिणी ने वक्तव्य को सर्वथा अस्वीकार कर दिया था और ऐसा करके नेहरू जी ने अपने वचनों को चरितार्थ किया था। आपने कहा था "मुझे कोई भी स्वाभिमान पूर्ण समझौता स्वीकार होगा किन्तु जब तक नेहरू वंश के किसी भी बच्चे में रक्त शेष है तब तक भारत पराजय स्वीकार नहीं कर सकता"।

बैठक के सदस्यों को गिरफ़्तार करने के स्थान पर सरकार ने कांग्रेस कार्यकारणी को जायज़ संस्था क़रार दे दिया और सभी कार्यकारणी कमेटियों के सदस्य रिहा कर दिये गये।

मृत्यु

छूटते ही सारे नेता पं० जी को देखने के लिये प्रयाग आये। डाक्टरों ने यद्यपि उन्हें बात करने के लिये कड़ाई के साथ मना कर दिया था फिर भी कार्यकारिणी में भाग लेने की उनकी इच्छा रहती थी। कार्यकारिणी की बैठक बम्बई में करने का गांधी जी का विचार सुन कर आपने सब को रुलाते हुए गांधी जी से कहा था, "भारत के भाग्य का निर्णय स्वराज्य भवन में करो, मेरे सामने करो, और मेरी मातृभूमि के अंतिम सन्मानपूर्ण समझौते में मुझे भी भाग लेने दो।" सालों ब्रिटिश सरकार से लड़कर पं० जी चतुर लड़ाकू हो गये थे। अपने आत्म संयम और प्रबल इच्छाशक्ति के बल पर वे हफ़्तों मृत्यु से भी लड़े। उस समय उनके निकट रहने वाले इस युद्ध को प्रत्यक्ष अनुभव करते थे। डाक्टर सत्यपाल ने ट्रिब्यून में लिखा था कि जब हम लोग उनके पास गये तो उन्होंने विचित्र गम्भीरता के साथ कहा "मैं रोग से लड़ूंगा और सबसे विशेषतया दासतारूपी दैत्य से लड़ूंगा"। ४ फ़रवरी को पंडित जी एक्सरे परीक्षा के लिये लखनऊ ले जाये गये। उस दिन आपकी तबियत अच्छी रही। महात्मा जी ने जब आपसे कहा, "यदि आप स्वस्थ हो जावें तो मैं स्वराज ले लूंगा" तो नेहरू जी ने हंसते हुए उत्तर में कहा था, "स्वराज्य तो मिल ही गया है, अब साठ हज़ार पुरुषों, स्त्रियों, और बच्चों ने इतना

अद्भुत त्याग किया है और जनता ने शान्तिपूर्वक गोलियाँ और लाठियाँ सहली हैं तो स्वराज्य के अतिरिक्त और फल हो ही क्या सकता है"। अकस्मात ५ ता० को आपकी दशा बिगड़ी और आधीरात के समय डाक्टरों ने आशा छोड़ दी। सारे नेतागण और सम्बन्धी चारपाई के पास आगये, किन्तु पंडित जी बोल न सके। ता: ६ फ़रवरी को ६½ बजे भारत के सेनापति स्वराज्य प्राप्ति का सुख लेकर विदा हो गये।

पं० मोतीलाल जी राजा की तरह ही रहे और राजा की तरह ही मरे। पुराण या इतिहास में भी इससे विशेष शरीफ़ दरबार किस राजा का था? पतिव्रता और देवत्व, लावण्य और सौन्दर्य, काव्य और संगीत, अनन्य भक्ति और निस्वार्थ त्याग यह सब साकार रूप में घंटों और दिनों आप के पास खड़े रहे और इस संसार से कूच करते समय भी आपने भारत वसुन्धरा के सर्वोत्कृष्ट रत्नों के दर्शन से अपने नेत्र तृप्त करके इह लीला संवरण की।

× × × × ×

पंडित मोतीलाल जी का व्यक्तित्व दबंग, रोबीला, और प्रभावशाली था। यह प्रतिभा उन्हें प्राकृतिक देन थी। महात्मा गांधी को देखकर प्रायः लोग कहते देखे गये हैं, "क्या यही महात्मा हैं"। सरदार पटेल आकृति

व्यक्तित्व

से एक देहाती किसान प्रतीत होते हैं

किन्तु पं० मोतीलाल जी पहली बार देखने वाले की दृष्टि में भी प्रतिभा-सम्पन्न व्यक्ति जंचते थे। उनकी सुघड़ ठोड़ी, चौड़ा माथा और चमकती हुई आखें अद्भुत प्रभाव डालती थीं। सर फ़ीरोज़शाह मेहता के लिये कहा जाता है कि उनकी उपस्थिति में कोई उनका विरोध करने का साहस नहीं करता था। पंडित जी का व्यक्तित्व भी अन्तिम सालों में वैसा ही बन रहा था। लेजिस्लेटिव असेम्बली में यह बात सर्व सम्मति से मानी जाती थी कि नेहरू जी का व्यक्तित्व ही सबसे विशेष चित्ताकर्षक और प्रभाव शाली था। आपके खादी परिधान से सुसज्जित शरीर में इतना बड़ा जादू था कि जब आपने अपनी मूंछे मुंडवाने का निश्चय किया तो सुन्दरता प्रिय गोष्ठियों में यह भय हुआ कि आपकी सबसे मनोहर विशेषता जाती रहेगी। शिमला की महिलाओं में भी सनसनी हुई और उनका एक डेप्यूटेशन पं० मोतीलाल जी के पास यह प्रार्थना करने गया कि वे मूंछें फिर से बढ़ा लें। नेहरू जी को हास्य में आनन्द तो आता ही था, आपने बड़ी गम्भीरता के साथ उनके प्रस्ताव पर विचार करने का वचन दिया। एक पखवारे के भीतर ही सारी महिलाएं जिनमें श्रीमती सरोजिनी नायडू भी थीं कहने लगीं कि पं० जी तो बिना मूंछों के भी ऐसे ही मनोहर हैं जैसे मूंछों समेत। मुस्कराहट सदा आपके मुख पर खेलती

रहती थी किन्तु जब आपकी भृकुटी कुटिल होती थी तो बड़े बड़े नेताओं के घुटने कांप जाते थे। आपका टेढ़ी निगाह से देखना भर चुटकी लेने का काम करता था और आपका चुटकी लेना तलवार भोंकने के बराबर था।

पं० मोतीलाल जी की सबसे बड़ी विशेषता थी महान-मस्तिष्क शक्ति। इस महान मस्तिष्क शक्ति ने विद्यार्थी अवस्था से लेकर मृत्यु पर्यन्त तक आप को देदीप्यमान किया। स्कूल और कालिज में विद्यार्थियों के सर्वमान्य नेता रहे और परीक्षाओं में सदा सर्व प्रथम पद पाया, हाईकोर्ट में अभूतपूर्व सफलता प्राप्त की और 'पेशे के जिन्न' कहलाये, राष्ट्रीय महासभा के विषम समयों में दो बार कर्णधार बने और कांग्रेस के 'मस्तिष्क' माने गये, असेम्बली में 'भारतीय पार्लियामेंटरी क्रम के पिता' कहाये जाने का श्रेय प्राप्त किया और सरकार और प्रजा-पक्ष दोनों की ही दृष्टि में अन्यतम स्थान पाया, बर्किनहैड के उत्तर में नेहरू रिपोर्ट रचकर भारत का सर ऊंचा किया और अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति पायी। असहयोग-आन्दोलन और सत्याग्रह-संग्राम में अपने युद्ध-नैपुण्य से सरकार को नाकों चने चबवा कर राष्ट्रीय सेना के सेनापति प्रसिद्ध हुये—इस सब की तह में आपकी असाधारण मस्तिष्क शक्ति ही थी।

विशेषताएं

नेहरू जी की उन्नति और सुख की परमावधि का दूसरा

बड़ा साधन था—वार्तालाप-नैपुण्य। इस कला के आप उस्ताद थे। आप के प्रेम, सौजन्य और वार्तालाप पटुता के कारण आपके पास आकर कोई उदास नहीं जाता था। हास्य और विनोद के तो आप पंडित थे और छोटे बड़ों सभी के साथ परिहास करने में आनन्द लेते थे। आप के वाक्चातुर्य और हास्य पाण्डित्य से आपके भोज का स्वाद दूना हो जाता था और बड़े बड़े व्यक्ति आपके यहाँ भोज खाने के इच्छुक रहते थे।

पण्डित जी की तीसरी विशेषता थी—व्यवहारिकता। पंडित जी पूर्णतया व्यवहारिक पुरुष थे, आदर्शवादिता से आपको अरुचि थी। आपके इसी गुण के कारण देश के सारे शिक्षित समाज का आप पर विश्वास था और प्रत्येक दल के लोग आपको श्रद्धा और आदर की दृष्टि से देखते थे। इसी कारण पंडित जी अपने राजनैतिक जीवन में प्रारम्भ से लेकर अन्त तक गरम और नरम दलों के मध्यस्थ रहे।

पंडित मोतीलाल जी की चौथी विशेषता थी—दृढ़ संयम। अपने कठोर शासन के लिये आप प्रसिद्ध थे। घर में तो आप का शासन कड़ा था ही, कांग्रेस और असेम्बली की भी यही दशा थी। कांग्रेस कार्यकर्ताओं से सदा आपका फौजी बर्ताव रहता था। असेम्बली में अपने सगे सम्बन्धी की भी थोड़ी सी अवज्ञा आप क्षमा न करते थे; अपने भतीजे पं०

श्यामलाल नेहरू से आप इसी कारण रुष्ट हो गये थे। आप के दृढ़ संयमके कारण ही स्वराजपार्टी का संगठन संसार की किसी भी लेजिस्लेटिव पार्टी के टक्कर का हो गया था। आपके इस दृढ़-संयम के कारण लोग आप को स्वेच्छाचारी कहा करते थे किन्तु आप इस अपवाद का ध्यान न करते हुए यथावत दृढ़ रहते थे।

नेहरू जी की पांचवी विशेषता थी—स्पष्ट वादिता। आप निष्कपटता की प्रति मूर्ति थे। कर्मवीर सुन्दरलाल जी ने जो कांग्रेस में सदा अपनी उग्रनीति के कारण आपके विरोधी रहे हैं आप की मृत्यु पर भाषण देते हुए कहा था कि पंडित जी सदा खुलकर काम करते थे, यदि विरोध या आलोचना करनी होती तो स्पष्ट रूप से डंके की चोट करते थे। पंडितजी के इसी गुण के कारण विरोधी भी श्रद्धा रखते थे। लन्दन के दैनिक पत्र 'डेली हैराल्ड' ने लिखा था "यदि पंडित मोतीलाल जी को शत्रु भी गिना जावे तो वे ऐसे शत्रु थे जिन्हें उनके शत्रु भी आदर ही नहीं वरन् महान सराहना की दृष्टि से देखते थे।"

पंडित जी की छठवीं विशेषता थी—अगाध देशप्रेम और महान त्याग। आपका अगाध देशप्रेम आज सारे देश के लिये आदर्श बन गया है जिस दिन से आप राजनैतिक क्षेत्र में आये उसी दिन से आपने देश को स्वतंत्र बनाने का

प्रयत्न किया और स्वराज्य-संग्राम में लड़ते लड़ते ही मरे। अपने सारे कुटुम्ब को देश सेवा में लगा दिया और त्याग का अद्भुत आदर्श उपस्थित किया। आपके महान त्याग को कौन नहीं जानता। अपार धनराशि में बैठ कर आपने फकीरी ली और अपना सर्वस्व माता की गोद में भेंट किया।

पंडित मोतीलाल जी में इनके अतिरिक्त भी अनेकों विशेषताएं थीं। आप का अदम्य साहस, आपकी धैर्यशीलता और आप का युद्धनैपुण्य प्रशंसनीय थे। आप स्वभावतः ही विद्रोही भी थे। एक बार स्वयं आपने कहा था "मैं अपने सारे जीवन भर विद्रोही रहा हूं। मैं अवश्य ही विद्रोही ही जन्मा हूंगा।" स्वेच्छाचारिता के होते हुए भी आप में अहम्मन्यता न थी। सन्त निहाल सिंह ने लिखा था। "हम लोगों ने बहुत देर तक बात की किन्तु इस बीच में मैंने एक शब्द भी उनके मुंह से अपने महान त्याग के बारे में न सुना। जब मैंने ऊंची वकालत और राजसी सुख और विलास का ज़िक्र किया तो वे दो एक क्षण मौन रहे और उसके बाद दूसरे विषयों पर बातचीत करने लगे।" पंडित जी में परोपदेशे-पाण्डित्य न था, जो कहते थे उसका स्वयं आचरण करते थे। देश को करबन्दी का आदेश देने के साथ ही स्वयं अपना २००००) इन्कमटैक्स देना आपने स्थगित कर दिया था। आपने निश्चय कर लिया था कि यदि इसके फलस्वरूप आनन्दभवन नीलाम हुआ तो आप सकुटुम्ब

गंगातीर पर झोंपड़ी डाल कर रहेंगे। नेहरू जी गुणों के समावेश में स्वयं ही अपनी उपमा थे।

पं० मोतीलाल जी सामयिक पुरुष थे। आपके जीवन में भारत का इतिहास लिखा हुआ है। जब भारत पाश्चिमीय संस्कृति और सभ्यता की चटक मटक देखकर आश्चर्य चकित हो रहा था तब आप पाश्चिमीय ठाठ बाट से रहे और जब देश ने अपनी परिस्थिति को पहिचाना तो आप मातृभूमि के सेवक और जनता के हृदय सम्राट हो गये। आप के राजनैतिक विचार भी इसी कारण क्रमशः समयानुसार आगे बढ़े। यही कारण था कि न तो आप माडरेटों के साथ ही रह सके और न उग्रदल को ही अपना सके, कांग्रेस कैम्प में भी आपका स्थान गरम और नरम दल के मध्यस्थ रहता था।

राजनैतिक विचार

पण्डित जी का राजनैतिक जीवन विचार-परिवर्तन की दृष्टि से तीन भागों में बांटा जा सकता है। प्रारम्भ में आप माडरेटों के भी माडरेट थे। ब्रिटिश न्यायप्रियता में आपको अगाध विश्वास था और ब्रिटिश चरित्र के प्रति आप के हृदय में असीम श्रद्धा थी। तुरन्त ही होमरूल की मांग भी आपकी दृष्टि में खिलवाड़ थी। देवी बेसेंट के साथ आप कुछ आगे बढ़े और उनकी गिरफ़्तारी पर आपका दूसरा राजनैतिक युग प्रारम्भ हुआ और भारतीय नौकरशाही के आप कट्टर आलो-

चक और विरोधी बन गये। किन्तु ब्रिटिश प्रजातंत्र के प्रति आप की श्रद्धा वैसी ही बनी रही। पञ्जाब हत्याकांड और गांधी-सम्पर्क ने आप में पुनः परिवर्तन किया और आप अंग्रेज़ जाति के चाल फरेब से घृणा करने लगे और स्वराजी तथा अन्त में पूर्ण स्वतंत्रतावादी हो गये।

हिन्दू मुसलिम प्रश्न पर आपके विचार बहुत दृढ़ थे। आप प्रथम भारतीय, द्वितीय भारतीय, और अन्त में भी केवल भारतीय ही थे। हिन्दू और मुसलिम हितों के नारे बुलन्द करने वालों को आप देश का शत्रु समझते थे। हिन्दू मुसलिम एक्यता पर आपको अगाध विश्वास था और देशोन्नति के लिये आप इसे प्रथम साधन मानते थे। नेहरू जी की दृष्टि में हिन्दू मुसलिम एक्य सम्भव ही नहीं वरन् सरल था। स्वयं आप इस एक्य की प्रतिमूर्ति थे और मुहम्मद याक़ूब के शब्दों में मुसलिम भारत कांग्रेस कैम्प में आप ही पर सबसे ज़्यादा विश्वास रखता था।

पंडित मोतीलाल जी के सामाजिक विचार राजनैतिक विचारों से सदा एक पग आगे रहे हैं। 'वसुधैव कुटुम्बकम्' विश्वास के आधार पर वर्णव्यवस्था और खान-पान की रुढ़ियों में आपको कभी विश्वास नहीं रहा। प्रारम्भ में आपके यहां परदे की रिवाज थी किन्तु १६०५ की यूरोप-यात्रा के बाद नेहरू

सामाजिक विचार

परिवार में इस पाशवी प्रथा का नाम निशान भी न रहा। विधवा विवाह के आप प्रतिपोषक थे और सन् १९११ में परेल मैरिज बिल कमेटी के सभापति रहे थे। इंटर-मैरिज और सिविल मैरिज को आप बुरा नहीं समझते थे। अपने सामाजिक विचारों में आप हिन्दुस्तानी से अंग्रेज़ ज़्यादा थे।

धार्मिक विचार

धर्म की ओर पंडित जी की कोई विशेष रुचि नहीं थी। प्रारम्भ से ही 'खाओ, पियो, और मौज करो' आपका सिद्धांत था। होमरूल आन्दोलन के समय थियोसोफ़ी की ओर आपकी रुचि बढ़ी थी। सन् १९२० में गांधी जी के स्पर्श में आकर आपने प्रथम बार सरल जीवन और आत्मोत्सर्ग की आवश्यकता समझी। आपके हिन्दू सभायिष्ट विरोधी प्रायः आपको अनीश्वरवादी और अहिन्दू कहा करते थे। महात्मा गांधी ने इस आरोपण को काटते हुए आपकी मृत्यु पर कहा था, "पंडित जी धर्म के अन्धभक्त न थे और कभी कभी वे धर्म की हंसी उड़ाया करते थे। इसका कारण यह था कि वे उन बुराइयों के विरोधी थे जो आज धर्म का अंग बन गयी हैं। कभी कभी पंडित जी धार्मिक धूर्तता पर चिढ़ते अवश्य थे किन्तु मैं यह अच्छी तरह जानता था कि वे ईश्वर वादी हैं। कल शाम को वे लगातार प्रिय राम नाम जपते रहे थे।"

नेहरू-द्वय

द्वितीय अध्याय

पंडित जवाहरलाल नेहरू

पंडित जवाहरलाल नेहरू का जन्म ता० १४ नवम्बर सन् १८८९ के दिन प्रयाग नगर में नेहरू-वंश के उन दिनों के निवासस्थान मुहल्ला मीरगंज में हुआ। इकलौते बेटे होने के कारण पिता माता का सारा स्नेह

बाल्यकाल और शिक्षा

आप ही में केन्द्रीभूत हो गया और आपके लालन पालन के लिये वे सारी सुविधाएं जुटायी गयीं जो किसी राजघराने अथवा धनवान शिक्षित कुटुम्ब में मिलना सम्भव हो सकती हैं। पंडित जवाहर-लाल जी के जन्म के साथ ही साथ नेहरू वंश का सौभाग्य सूर्य भी उदय हुआ और धन और मान पंडित मोतीलाल जी

के पीछे पीछे दौड़ने लगे। पंडित मोतीलाल जी ने पाश्चिमीय रहन सहन स्वयं अपनाया और जवाहरलाल जी की जीवनचर्या भी लड़कपन से अंग्रेज़ी बालकों के ढंग पर ही बनायी गयी। पांच वर्ष की अवस्था ही में आपकी शिक्षा के लिये अंग्रेज़ अध्यापिकाएं नियुक्त कर दीं गयीं और ६ वर्ष भर आप उन्हीं से शिक्षा पाते रहे। सन् १९०० में प्रसिद्ध थियोसोफ़िस्ट मिस्टर ब्रुक्स प्रयाग आये और पंडित मोतीलाल जी ने अपने थियोसोफ़िस्ट मित्रों के अनुरोध से उन्हें पंडित जवाहरलाल का शिक्षक नियुक्त किया। मिस्टर ब्रुक्स आनन्दभवन में ही रहते थे और जवाहरलाल को शिक्षा दिया करते थे। वे सादा जीवन और उच्चविचार की प्रतिमा थे तथा धार्मिक वृत्ति, मननशीलता और स्वाध्याय-प्रियता उनके विशेष स्वभाव थे। मिस्टर ब्रुक्स ने जवाहरलाल जी के जीवन पर स्थायी प्रभाव डाला और एक प्रकार से आज के राष्ट्रीय नेता की रचना की। सन् १९०३ में पंडित मोतीलाल जी ने मिस्टर ब्रुक्स की अन्यतम धार्मिक और नैतिक दीक्षा और उसके बढ़ते हुए प्रभाव से असन्तुष्ट होकर उन्हें शिक्षक पद से प्रथक कर दिया। इसके बाद अन्य शिक्षक पढ़ाते रहे और हिंदी तथा संस्कृत का भी आपने साधारण अभ्यास कर लिया।

सन् १९०५ में जवाहरलाल जी ने पिता माता के साथ इंग्लैंड के लिये प्रस्थान किया और वहां सुप्रसिद्ध हैरो स्कूल

में भर्ती हुए। हैरो और एटन के सुप्रसिद्ध पब्लिक स्कूल हैं और यहां केवल राजाओं और धनपतियों के बालक ही पढ़ सकते हैं। हैरो में गायकवाड़ के स्वर्गीय राजकुमार और कपूर्थला के राजकुमार जो आजकल टीका साहिब (युवराज) हैं आपके सहपाठी थे। स्कूल के जीवन में ही पंडित जी लाला हरदयाल से, जो उन दिनों आक्सफोर्ड में पढ़ते थे, मिला करते थे। सन् १९०७ में हैरो से इंट्रेंस परीक्षा पास कर जवाहरलाल जी ने ट्रिनटी कालिज केम्ब्रिज में उच्चशिक्षा पायी। यहां 'इन्डियन मजलिस' नामक भारतीय विद्यार्थियों की सभा के आप प्रमुख सदस्य थे। केम्ब्रिज में डाक्टर सैफुद्दीन किचलू, टी० ए० के० शेरवानी, डाक्टर सय्यदमहमूद, मिस्टर के० एम० ख्वाजा और सर शाहमुहम्मद सुलेमान आपके समकालीन थे और जिस वर्ष आप कालिज में भर्ती हुए उसी वर्ष श्रीयुत जे० एम० सेनगुप्ता अपना अन्तिम वर्ष समाप्त कर चुके थे। जून सन् १९१० में नेहरू जी ने विज्ञान विभाग की परीक्षा में द्वितीय श्रेणी की आनर्स (प्रतिष्ठा) प्राप्त की और इन्डियन सिविल सर्विस की परीक्षा में बैठने तथा बैरिस्टरी पढ़ने के लिये लंदन चले आये। भारत के भाग्य से पंडित जी सिविल सर्विस परीक्षा में न आसके और सन् १९१२ की जून में 'इनर टेम्पिल' से बैरिस्टरी की डिग्री लेकर मातृभूमि के लिये लौटे।

इस प्रकार पंडित जवाहरलाल भारत के किसी भी स्कूल में

नहीं पढ़े और ब्रिटिश साम्राज्य के सबसे विशेष राजसी विद्यालयों के विद्यार्थी रहे। जहां दस साल पहले मिस्टर ब्रुक्स से प्रभावित होकर पंडित जवाहरलाल सादगी की प्रतिमूर्ति बन गये थे वहां हैरो, केम्ब्रिज, और लन्दन ने उन्हें विलासप्रिय और फ़ैशनेबिल बना दिया। उनकी जीवनचर्या, वेशभूषा और आदतें सभी अंग्रेज़ियत के ढांचे में ढल गयीं। जब आप भारत आये उस समय एड़ी से चोटी तक पाश्चात्य रंग में रंग चुके थे। भारत में आकर उन्हें परदेश सा ज्ञात होता था और वे आये दिन कुटुम्बियों से इंग्लैंड लौट जाने का विचार प्रकट किया करते थे। मार्च सन् १९२२ में अदालत के सामने बयान देते हुए आपने स्वयं कहा था, "दस साल से कम हुए जब कि इंग्लैंड में बहुत दिन रहने के पश्चात मैं भारत वापिस आया। मैंने वहां पब्लिक स्कूल और विश्वविद्यालय में साधारण ढंग पर ही शिक्षा पायी थी, हैरो और केम्ब्रिज के पक्षपात मुझमें ख़ूब आगये थे और अपनी पसन्दगी और नापसन्दगी में मैं शायद हिन्दुस्तानी से अंग्रेज़ ज़्यादा था। मैं संसार को लगभग एक अंग्रेज़ की दृष्टि से देखता था और इसलिये मैं इंग्लैंड और अंग्रेज़ों का इतना पक्षपाती होकर भारत को वापिस आया जितना किसी भारतवासी के लिये सम्भव हो सकता था।"

पंडित जवाहरलाल जी सन् १९१२ में भारत आये और उसी

वर्ष से प्रयाग हाईकोर्ट में प्रेक्टिस करने लगे। यद्यपि पंडित मोतीलाल जी की सदा यही चेष्टा रहती थी कि आप भी उन्हीं की टक्कर के वकील बनें किन्तु इस क्षेत्र में आप कोई उल्लेखनीय सफलता नहीं पा सके। सन् १९१८ से आपने हाईकोर्ट जाना कम कर दिया और सन् २० में तो सदा के लिये विदा मांग ही ली। सन् १९१६ के फर्वरी मास में दिल्ली के व्यवसायी श्रीयुत जवाहरमल कौल की सुपुत्री कमला कौल का आपने पाणिग्रहण किया और दाम्पत्य जीवन व्यतीत करने लगे।

जवाहरलाल जी जबसे इंग्लैंड से लौटे तभी से कहा करते थे कि मैं आधा समय वकालत में दूंगा और आधा राजनीति में। उस समय आप राजनीति को वास्तविक गम्भीर दृष्टि से न देखते थे; अंग्रेज़ों की नाईं राजनीति आपके मनोविनोद की वस्तु थी। इंग्लैंड से लौटने की साल ही सन् १९१२ में बांकीपुर कांग्रेस देखने गये। सन् १९१३ में नेहरू जी युक्त प्रान्तीय कांग्रेस कमेटी के सदस्य बन गये और कांग्रेस कार्य में भाग लेने लगे। अफ़रीकन भारतीयों की सहायता के लिये धन एकत्रित करने, फ़िजी में भारतीय मज़दूरों को अनुचित इक़रार नामे लिखवा कर ले जाने के विरुद्ध आन्दोलन करने, और महामना गोखले की मृत्यु पर शोक जुलूस संगठित करने के कार्य में प्रयाग में आपने बहुत दौड़ धूप की। सन्

राजनीति

१६१६ में होमरूल लीग की रचना हुयी और आपको अनन्य लगन को देश प्रेम में संलग्न हो जाने का अवसर मिला। आप प्रयाग लीग के संयुक्त मंत्री हो गये और होमरूल लीग के कार्य को प्रयत्न के साथ सम्पादन किया। धन एकत्रित करने और सभा संगठित करने का विशेष भार आपही के बांट पड़ता था और उसे आप खूबी के साथ पूरा करते थे। इसी समय से आपकी रुचि गरमदल की ओर थी और प्रयाग के गरमदल के अगुआ श्री सुन्दरलाल जी तथा श्री मंजर अली सोख्ता का ही आपका साथ था। पंडित मोतीलाल जी को आपकी यह प्रगति और साथ न भाता था किन्तु उनके लाख चेष्टा करने पर भी न यह प्रगति बदलती थी और न यह साथ छूटता था। आये दिन आनन्दभवन में इसी प्रश्न पर कलह रहा करती थी।

सन् १६१६ में गांधी जी ने सत्याग्रह की घोषणा की और आपने पिता की इच्छा के विरुद्ध पहली ही बारी में सत्याग्रह प्रतिज्ञापत्र भर दिया। सत्याग्रह घोषणा के पीछे ही

राजनैतिक लगन

पंजाब हत्याकांड हुआ और आल इन्डिया कांग्रेस कमेटी ने पंडित मोतीलाल जी के सभापतित्व में पंजाब जांच कमेटी नियुक्त की। पंडित जवाहरलाल भी पिता के साथ एक सब कमेटी के मेम्बर की हैसियत से हत्याकांड की जांच करने पन्जाब गये। मामले की छान बीन करने, पीड़ितों की दुख गाथा

सुनने और उन्हें आश्वासन देने में आपने अथक परिश्रम किया। दुःखियों की आहों और नौकरशाही के पाशविक अत्याचारों के ज्ञान ने आपके भावुक हृदय पर बड़ा क्रांतिकारी प्रभाव डाला। इन्हीं दिनों महात्मा जी के स्पर्श में भी आने का आपको साबका पड़ा और आप उसी समय से गांधी जी और गांधीवाद के अनन्य भक्त हो गये। इन प्रबल शक्तियों ने आपके जीवन में महान परिवर्तन किया और आप देश प्रेम की प्रतिमा और स्वतंत्रता के अन्यतम पुजारी बन गये।

पंजाब से लौट कर पंडित जी नयी स्फूर्ति के साथ प्रांतीय कांग्रेस के संगठन और अवध के किसान आन्दोलन में जुट पड़े। "किसान समस्या के सम्पर्क में आते ही इन भुखमरों से उन्हें स्वाभाविक प्रेम हो गया। उनकी दरिद्र दशा का सच्चा ज्ञान प्राप्त कर उनका हृदय रो दिया। राजप्रसाद में रहकर और सुखों की गोद में पलकर उन्होंने कभी न सोचा था कि हमारे ही देश में ऐसे अगणित भाई भी हैं जिन्हें पेट भर भोजन नहीं मिलता और गर्मी और सर्दी में चिथड़े लगाये हुए रहते हैं। दिन रात परिश्रम करके मनुष्यमात्र का उदर भरनेवाले किसानों की इस दशा को देखकर वे सिहर उठे। समाज, पूंजीवाद और आधुनिक सरकार से उन्हें घृणा हो गयी। सन् १९१९ से २१ तक किसान आन्दोलन ने अवध में जो प्रचंडरूप धारण किया था उसमें पंडित जी का बहुत बड़ा

हाथ था। सारे अवध में विशेषतया प्रतापगढ़ ज़िले में रात दिन भ्रमण करना, उपदेश देना, और किसानों को संगठित बनाना ही आपका काम था। जो सदा राजप्रसाद में राजसी ठाठ बाट से रहे वे ही दुःखित कृषकों के प्रेम में पागल होकर बहुधा किसानों की झोपड़ियों में कम्बल के उढ़ौने बिछौने पर सोते थे। पाश्चात्य वेशभूषा से घृणा हो गयी थी और देहाती परिधान में ही आप देहातों में जाते थे। अच्छे से अच्छे होटलों में भोजन खाकर जो आनन्द न मिला था वह किसानों की मोटी रोटियों और साग पात में मिलता था। घर से बाहर जो पैदल न निकलते थे वे ही जवाहरलाल अरहर के खेतों में, पानी में, और देहात की गलियों में धोती चढ़ाये मीलों पैदल चलते थे। कितना बड़ा परिवर्तन था। पूर्वपरिचित लोग इस परिवर्तन को देखकर दांतों तले अंगुली दबाते थे।

सरकार की क्रूर दृष्टि पण्डितजी पर पड़ चुकी थी और वह उनके ऊपर दमन चक्र चलाने की घात में थी। सन् १९२० की गर्मियों में आप मां, पत्नी और बहिन के साथ मसूरी में सेवाय होटल में ठहरे हुए थे। उन्हीं दिनों अफ़गान प्रतिनिधि भी जो कि ब्रिटिश प्रतिनिधियों से संधि की शर्तों पर बहस कर रहे थे वहीं ठहरे थे। ज़िले के अधिकारीवर्ग नेहरू जी की

पहला वार

उपस्थिति से डर गये और उन्होंने आप से यह वचन लेना चाहा कि आप अफ़गानों से किसी प्रकार का वार्तालाप न करेंगे। यद्यपि आपने उस समय तक अफ़गानों को दूर से भी नहीं देखा था किन्तु ऐसी आज्ञा को सिद्धान्ततः अनुचित समझ कर वचन देने से इन्कार कर दिया। फल यह हुआ कि आप को २४ घंटे के भीतर मंसूरी छोड़ जाने की आज्ञा मिली और मां, स्त्री, और बहिन को बीमारी की दशा में छोड़ना पड़ा। कुछ दिनों बाद सरकार को सूचना दी गयी कि आज्ञा स्थगित हो या न हो, जवाहरलाल जी मंसूरी आने से न रुकेंगे। इस पर आज्ञा वापिस ले ली गयी और आप मंसूरी जा सके।

इसी समय महात्मा गांधी ने पंजाब हत्याकांड और खिलाफ़त के प्रश्न को लेकर असहयोग प्रोग्राम देश के सामने रखा। पं० जवाहरलाल प्रारम्भ से ही प्रोग्राम के पक्षपाती हो गये और कलकत्ता तथा नागपुर के कांग्रेस अधिवेशनों में गांधी जी का साथ दिया। नागपुर कांग्रेस का निर्णय

असहयोग आन्दोलन

होते ही आपने वकालत से त्याग पत्र दे दिया और अपना सारा समय और शक्ति महासभा की सेवा में लगा दी। पण्डित जवाहरलाल जी उन दिनों प्रान्तीय कांग्रेस के महा-मंत्री थे और प्रांत के सारे संगठन का भार आप ही के कंधों पर था। कांग्रेस कमेटियों का स्थापित करना, प्रांतीय दफ़्तर का काम

करना और प्रांत में प्रचार करना आपका नित्य का काम था। प्रात: ५ बजे से लेकर रात को ११ बजे तक आप निरत परिश्रम करते थे। आपका अविश्रान्त परिश्रम, आपका अगाध देश प्रेम और आपका अनुपम उत्साह और स्फूर्ति, सहकारियों के कार्य में जीवन संचार करते थे।

नेहरू जी उन दिनों कांग्रेस के रचनात्मक कार्य के अतिरिक्त 'इंडिपेन्डेन्ट' में भी ख़ासा सहयोग दिया करते थे। आप इस पत्र के डायरेक्टर, व्यवस्थापक, और लेखक थे। श्री जोज़ेफ़ और रंगाआयर सम्पादक थे। सरकार ने आप को और सम्पादक द्वय को नोटिस दिया कि अपने कुछ राजद्रोहात्मक लेखों के लिये माफ़ी मांगें। भला यह कैसे सम्भव हो सकता था। परिस्थिति विपरीत देखकर सरकार इस समय आप पर दमनचक्र चलाने से रुक गयी और केवल रंगाआयर को एक वर्ष का कठोर कारावास दंड देकर शांत हो गयी।

इसी अवसर पर 'प्रिंस आफ़ वेल्स' भारत में आये और कांग्रेस ने उनका बहिष्कार किया। फलस्वरूप कांग्रेस वालन्टियर कोर ग़ैरक़ानूनी संस्था घोषित की गयी और आप ६ दिसम्बर को सपरिवार गिरफ़्तार कर लिये गये। गिरफ़्तारी के समय शिकन आना तो बड़ी बात है, ज्ञात होता था कि जैसे आनेवाली यातनाओं की ओर आप का ध्यान ही नहीं है। उस समय जो दो चार मिनट मिले उसमें आपने

यह उचित समझा कि कुछ कांग्रेस कार्यकर्ताओं को उनके पत्रों का उत्तर लिख दें। कुटुम्बियों और सहकारियों के साथ आप लखनऊ जेल के सिविल वार्ड में रखे गये। अभी जेल गये तीन महीने भी नहीं हुए थे कि पुनर्विचार के लिये अदालत बैठी और आप रिहा कर दिये गये। जेल से छूटते ही नेहरू जी ने महात्मा जी से मिलने के लिये अहमदाबाद को प्रस्थान किया किन्तु आपके पहुँचने के पहले ही वे गिरफ्तार हो गये। गांधी जी के मुकद्दमे भर पंडित जी अहमदाबाद ही रहे। गुरु जी का आदेश लेकर जवाहरलाल जी प्रयाग आये और विदेशी वस्त्र बहिष्कार के कार्य में जुट पड़े। बहिष्कार की सफलता से चिढ़कर सरकार ने आप को धमकी देने और बलपूर्वक अपहरण करने के अपराध लगाकर दूसरी बार गिरफ्तार कर लिया और १७ मई को १½ वर्ष का कारावास दंड सुना दिया। नेहरू जी पुनः प्रसन्नता पूर्वक जेल गये। उन्हें अपने ही शब्दों में 'जेल के बाहर एक प्रकार से अकेला और सुनसान सा ज्ञात होता था और स्वार्थ फिर वहीं जाने को प्रेरित करता था।" जनवरी सन् १६२३ में केवल ८ महीने के कारावास के बाद आप बहुत से राजबन्दियों के साथ छोड़ दिये गये। जेल से आकर पंडित जी प्रांतीय कांग्रेस के मंत्री बनाये गये और पुनः राजनैतिक कार्य में संलग्न हो गये।

जिस समय पंडित जवाहरलाल जी जेल से छूट कर आये उस समय परिवर्तनवादियों और अपरिवर्तनवादियों में लात घूंसा चल रहा था। श्री राजगोपालाचार्य के नेतृत्व में अपरिवर्तनवादियों ने गया कांग्रेस में विजय पायी थी और दासबाबू तथा पंडित मोतीलाल जी इस पराजय से निराश न होकर

मंझपतीदल

स्वराजपार्टी को दृढ़ बना रहे थे। पंडित जवाहरलाल जी इस परिस्थिति को देख कर किं कर्तव्य विमूढ़ होगए। आपके सामने दो ही मार्ग थे या तो इनमें से ही एक दल में मिल जाना, अन्यथा एकाकी रह कर दोनों दलों में प्रेम का बीज बोने की चेष्टा करना। पहले मार्ग में दोनों ओर मीठा ही मीठा था, यदि आप गुरू का पक्ष लेकर पिता का विरोध करते तो यह स्पष्ट था कि जनता आपको सिर पर उठा लेती और आप परिवर्तन वादियों के नेता होजाते, यदि आप पिता का पक्ष लेते तो असेम्बली की डिप्टीलीडरी या कौंसिल का नायकत्व ग्रहण करते। किन्तु आपने इन प्रलोभनों को ठुकरा कर अपने सिद्धांत के अनुसार दूसरा ही मार्ग ग्रहण किया।

२७ फ़र्वरी को प्रयाग में अ.भा. कांग्रेस कमेटी की बैठक में मौलाना आज़ाद और आपके प्रयत्न से कुछ दिनों के लिये तू तू मैं मैं बन्द होगई किन्तु स्थायी संधि न हो सकी। इसी बीच में एक ऐसा दल बन रहा था जो कांग्रेस कार्यक्रम

यथावत रखते हुए ऐसा मार्ग ढूंढ रहा था जिसमें दोनों दल प्रेमपूर्वक कार्य कर सकें। २५ मई को अ.भा. कांग्रेस कमेटी की बम्बई वाली बैठक में इन्हीं मंझपतियों ने निम्नलिखित आशय का प्रस्ताव पेश किया जो बहुमत से पास होगया। "यह दृष्टि में रखते हुए कि कांग्रेस के बहुत से प्रभावशाली सदस्यों का विचार कौंसिल प्रवेश के पक्ष में है, निश्चय हुआ कि गया प्रस्ताव के अनुसार कौंसिलों के बहिष्कार के लिये कोई विशेष अन्दोलन न किया जावे"। इस प्रस्ताव पर अपरि- वर्तनवादी कार्यकारिणी ने त्याग पत्र दे दिया और मंझपती दल का मन्त्रिमंडल बना। पं० जवाहरलाल जी वर्किंग महा- मंत्री बनाये गये। कई प्रान्तों ने उक्त प्रस्ताव के विरुद्ध आचरण किया और उनके आचरण पर विचार करने के लिये ८-१० जुलाई को अ.भा. कांग्रेस कमेटी की बैठक नागपुर में बुलायी गयी। कमेटी ने कार्यकारिणी का दण्डविधान सम्बन्धी प्रस्ताव गिरा दिया और मंझपतियों के त्यागपत्र देने पर परिवर्तनवादी पुनः कार्यकारिणी में पहुँच गए। सितम्बर के महीने में राष्ट्रीय महासभा का विशेष अधिवेशन दिल्ली में हुआ और स्वराजिस्टों को कौंसिल प्रवेश की आज्ञा मिल गयी।

दिल्ली कांग्रेस समाप्त होने पर नेहरू जी नाभा राज के पीड़ित अकालियों की दुःखगाथा सुनने जैतो ग्राम की ओर चल पड़े। प्रो. कृपलानी और श्री के. सन्तानम भी आपके साथ

थे। जैसे ही पहुँचते ही आप को राज्य खाली कर जाने की आज्ञा दी गयी और इन्कार करने पर आप लोग गिरफ़ार कर लिये गए। नाभा में मुक़द्दमा हुआ और आपको दो वर्ष का कड़ा कारावास दंड दे दिया गया किन्तु दण्ड सुनाने के दिन ही शासक की आज्ञा से आप रिहा कर दिये गये। जब आप नाभा ही थे तभी आपको अपने प्रान्तीय कांग्रेस के सभापति मनोनीत होने की सूचना मिली। दैव वश पंडित जी कान्फ्रेंस के अवसर पर बीमार पड़ गये और आपकी अनुपस्थिति में आपका लिखित भाषण पढ़ा गया।

प्रधान मंत्रित्व

दिसम्बर सन् १९२३ में महासभा का अधिवेशन मौलाना मुहम्मद अली के सभापतित्व में कोकोनाडा में हुआ। पं० जवाहरलाल जी ने अधिवेशन के सामने वालन्टियर संगठन का प्रस्ताव रखा जिसे महासभा ने स्वीकार कर लिया। इसी अवसर पर आपके सभापतित्व में अखिल भारतीय वालंटियर कान्फ्रेंस हुई और हिन्दुस्तानी सेवादल की स्थापना हुई। नेहरू जी ही हिन्दुस्तानी सेवादल आलइन्डिया बोर्ड के प्रथम सभापति बनाये गये। कोकोनाडा कांग्रेस में अपरिवर्तन वादियों ने अपनी सारी शक्ति संगठित करके एक बार पुनः देश को पुराने कार्यक्रम पर बनाये रखने की चेष्टा की किन्तु वे विफल हुए और कांग्रेस सत्ता स्वराजिस्टों के हाथ में चली

गयी। नेहरू जी कोकोनाडा में प्रथम बार आलइन्डिया कांग्रेस कमेटी के प्रधानमंत्री बनाये गये। उस समय से आप यूरोप यात्रा के दो वर्ष और सभापतित्व का एक वर्ष छोड़कर बराबर इस पद पर रहे हैं। यह एक निर्विवाद सत्य है कि आल-इन्डिया कांग्रेस कमेटी के दफ़्तर को जीता जागता रूप देने का सारा श्रेय पं० जवाहरलाल जी को ही है। जितना संयम, परिश्रम और मुस्तैदी से पंडित जी आफ़िस का काम करते हैं उतना कोई वैतनिक सेक्रेटरी भी नहीं कर सकता। प्रयाग में रहने के दिनों में ११ से ५ बजे तक लगातार दफ़्तर का काम करते वे दिखाई देते हैं। सारे पत्रों का जवाब स्वयं हाथ से लिखकर देते हैं और दफ़्तर में बैठे बैठे सारी कांग्रेस मशीन को चलाया करते हैं। देश भर की राजनीति में भाग लेते हुए भी जिस सफलता के साथ आपने कांग्रेस आफ़िस को संभाला है उसकी सराहना नहीं की जा सकती।

यह युग नेहरू जी के लिये रचनात्मक कार्य का था। अस्तु जेल से आने के कुछ समय बाद ही आप प्रयाग म्युनिसिपिल बोर्ड के चेयरमैन निर्वाचित हुए और आपने प्रधान मंत्रित्व के साथ साथ इस भार का भी सुघड़ाई के

प्रयाग म्युनिसिपिल बोर्ड

साथ सम्पादन किया। प्रयाग के कलक्टर मिस्टर एलेक्ज़न्डर ने आपके बोर्ड के कार्य का व्यंग्य के साथ निम्नलिखित आनन्ददायक निरूपण

किया था। "यह प्रसन्नता की बात है कि बोर्ड राष्ट्रीयता की भावनाओं का संचार करने की चेष्टा कर रहा है और निम्न-लिखित उद्योग उल्लेखनीय हैं :—

(१) स्कूलों में कताई की व्यवस्था।

(२) स्कूलों में सेवासमिति।

(३) अंगरेज़ी के स्थान पर हिन्दी का प्रयोग।

(४) छुट्टियों की फिहरिस्त में तिलक और गांधी दिवस की बढ़ोतरी।

(५) छुट्टियों की फिहिरिस्त से 'साम्राज्य दिवस' का निकाल दिया जाना।

(६) महात्मा गांधी और मौ० शौकतअली को सम्मानपत्र देना।

(७) महात्मा गांधी के जेल से छूटने पर जलसा।

(८) वायसराय का स्वागत करने से इन्कार।

(९) स्कूल के बच्चों को सभाओं और राष्ट्रीय प्रदर्शनों में स्वतंत्र रूप से भाग लेने के लिये क्रमशः प्रोत्साहन देना।"

सन् १९२६ के प्रारम्भ में पत्नी के इलाज के लिये आपने यूरोप-यात्रा की और म्युनिसिपिल बोर्ड से प्रथक हो गये।

सन् १९२६ के आरम्भ में कमला जी का स्वास्थ्य बहुत बिगड़ गया और डाक्टरों ने उन्हें इलाज के लिये स्विटज़रलैंड ले जाने की सम्मति दी। अस्तु पंडित जी ने मार्च में सपत्नीक

यूरोप में

यूरोप के लिये प्रस्थान किया। कमला जी का उपचार प्रायः जेनेवा और मोन्टाना में हुआ। इस काल में पंडित जी को मनन और स्वाध्याय का अच्छा अवसर मिला। आपके कई लेख भी यूरोपीय और भारतीय पत्रिकाओं में निकले। कमला जी का स्वास्थ्य संभलने पर नेहरू जी यूरोप के भिन्न भिन्न देशों का पर्यटन करने के लिये चल पड़े। इटली, फ्रांस, हालैंड, जर्मनी, इंगलैंड, बेलजियम और रूस गये और वहां के राजनैतिक नेताओं से भेंट की। यूरोपीय महाद्वीप पर भ्रमण करते समय आप बहुत से देश निर्वासित भारतीयों से भी मिले जिनमें निम्नलिखित उल्लेखनीय हैं—वीरेन्द्रनाथ चट्टोपाध्याय, राजा महेन्द्रप्रताप, मोलवी बरकतुल्ला, मौलवी उबेदुल्ला, चम्पकरामन पिल्ले, और श्याम जी कृष्ण वर्मा।

राष्ट्रीय महासभा का आदेश पाकर पंडितजी भारतीय कांग्रेस के प्रतिनिधि होकर ब्रूसेल्स अंतर्राष्ट्रीय कांग्रेस में शामिल हुए। भारतीय महासभा के प्रतिनिधि होने के कारण वहां आपका बहुत सम्मान हुआ और आप अन्तर्राष्ट्रीय कांग्रेस के पांच सम्मानित सभापतियों में चुने गये। पंडित जी ने इस कांग्रेस के मंच से अंतर्राष्ट्रीय सहानुभूति भारत की ओर आकर्षित करने का यथाशक्ति प्रयत्न किया और सफल भी हुए। सोवियट रूस की दसवीं वर्षगांठ के उत्सव में शामिल होने का निमंत्रण

पाकर आप ग़रीबों और मज़दूरों के रूस गये। मास्को पहुंच कर आपने सोवियट रूस के महान परिवर्तन को देखा। जिस साम्यवाद को अब तक किताबों में देखा था उसका प्रत्यक्ष रूप वहां देखने में आया। ज़ार के गगनचुम्बी राज-प्रासाद में मज़दूर संघ और भोजनालय देखे। बड़े से बड़े सरकारी कर्मचारियों को एक सी ही वेशभूषा में मज़दूरों से संगी कह कर मिलते हुए पाया। प्रत्येक स्त्री और पुरुष को हथौड़ा और हंसिया का चिन्ह लगाये गौरवोन्मुख और सुखी देखा। यह सब देखकर नेहरू जी विस्मित रह गये। थोड़े ही काल में रूस ने जो परिवर्तन किया था उसे देखकर दांतों तले उंगली दबानी पड़ती थी। आप विशेष दिन रूस में न रह सके। राष्ट्रीय महासभा के अधिवेशन में शामिल होने के लिये आपको शीघ्र ही चल देना पड़ा।

यूरोप और रूस की इस यात्रा ने आपके विचार-जगत में पुनः एक महान परिवर्तन किया और आप लेनिन-भक्त और साम्यवाद के पुजारी होकर भारत को लौटे। विदेशों में घूम कर और दलित राष्ट्रों के प्रतिनिधियों तथा यूरोप के राजनैतिक महारथियों के स्पर्श में आकर अंतर्राष्ट्रीय अनुभव विस्तृत हो गया था और आप स्वराज प्राप्ति के लिये अंतर्राष्ट्रीय सहानुभूति आकर्षित करने की महान आवश्यकता अनु-

मद्रास कांग्रेस

भव करने लगे थे। इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिये नेहरू जी ने मद्रास कांग्रेस में दो मार्के के प्रस्ताव उपस्थित किये—एक भावी युद्ध में इङ्गलैंड का साथ न देने और दूसरा कांग्रेस का ध्येय पूर्णस्वतंत्रता घोषित करने के सम्बन्ध में। इन दोनों प्रस्तावों ने देश के कार्यकर्ताओं को आपकी ओर आकर्षित किया और आप सर्वभारतीय नेताओं की पंक्ति में आ गये। इसी अवसर पर पंडित जी ने रिपब्लिकन कांग्रेस और हिन्दुस्तानी सेवा-दल के सभापति का आसन भी ग्रहण किया।

मद्रास कांग्रेस के बाद ही आप कांग्रेस की आज्ञाओं को कार्यरूप में परिणित करने और अपने नवीन सिद्धांतों और विचारों का प्रचार करने के कार्य में जुट पड़े। सर्वदल सम्मे-

सर्वदल सम्मेलन और साइमन कमीशन

लन के संगठन और नेहरू रिपोर्ट की तैयारी में आपने अथक परिश्रम किया, जिसका उल्लेख और सराहना नेहरू रिपोर्ट ने स्वयं की है। साइमन कमीशन का बहिष्कार करने में भी आपने बड़ी दौड़ धूप की और सारे संयुक्त प्रान्त में इसी सम्बन्ध में दौड़ा किया। कमीशन के बहिष्कार में ही पंडित जी को लखनऊ में पुलिस के डंडों का शिकार होना पड़ा। इस अवसर पर आपने महान धैर्यशीलता और असीम साहस का परिचय दिया था।

अगस्त सन् २८ में नेहरू रिपोर्ट पर विचार करने के लिये

लखनऊ में सर्वदल सम्मेलन हुआ। बरसों के सतत आन्तरिक मतभेद के बाद पिता और पुत्र में स्पष्ट मतभेद हुआ। पंडित जवाहरलाल जी ने पूर्णस्वतंत्रता-वादियों के अगुआ की हैसियत से केवल साम्प्रदायिक मसले को छोड़कर शेष नेहरू रिपोर्ट का विरोध किया। इस समय जो भाषण आपने दिया था उससे ज्ञात होता था जैसे बरसों का रुका हुआ ज्वालामुखी एक दम फट गया हो। आपने साम्यवाद का पृष्ठिपोषण किया और वैयक्तिक सम्पत्ति वाले उपनियम की तीव्र आलोचना की। इस पर एक ताल्लुक़ेदार ने चिढ़कर आवाज़ कसी कि "आनन्द भवन को गिरा दो"। बेचारा ताल्लुक़ेदार इस क्रोपाटकिन की लगन से अपरिचित था। इस व्याख्यान के अतिरिक्त पूर्णस्वतंत्रतावादियों ने कान्फ्रेंस में कोई भाग नहीं लिया। ता० ३ और ४ नवम्बर को दिल्ली में इन्डिपेन्डेन्स लीग की रचना हुयी और पंडित जवाहरलाल जी इसके मंत्री बने। कलकत्ते में राष्ट्रीय महासभा का अधिवेशन हुआ और उस समय भी आप पिता के विरुद्ध खड़े हुए। महात्मा जी के प्रयत्न से इन्डिपेन्डेन्स लीग समझौता प्रस्ताव पर सहमत हो गयी। यद्यपि आपने सम्मति दे दी थी फिर भी आपका हृदय दुखः-ही रहा था और इस कारण आप समझौता प्रस्ताव के उपस्थित किये जाने के समय अनुपस्थित रहे। इस प्रस्ताव के

पूर्ण स्वतंत्रता

अनुसार कांग्रेस ने सरकार को चेतावनी दी कि यदि ब्रिटिश सरकार ने नेहरू रिपोर्ट के आधार पर औपनिवेशिक स्वराज्य न दिया तो कांग्रेस पूर्ण स्वाधीनता की घोषणा कर देगी तथा करबन्दी और सत्याग्रह का आन्दोलन करेगी और उस समय तक देश को आगामी संग्राम के लिये तैयार करेगी।''

युद्ध की तैयारी

पंडित जवाहरलाल जी जब से यूरोप से आये थे तभी से देश को संग्राम के लिये तय्यार कर रहे थे। पंजाब, दिल्ली, केरल और संयुक्तप्रान्त की प्रान्तीय कान्फ्रेन्सों के सभापति के आसन से क्रांति का संदेश घर घर पहुंचा चुके थे। जब से आप यूरूप से आये तभी से नवयुवकों में जीवन और जाग्रत उत्पन्न करने तथा उनके द्वारा साम्प्रदायिकता के भूत को भगाने की ओर आपका ध्यान गया। पंडित जी ने यूथलीग की रचना की और मास्को के बड़े गिरजे के सामने लिखा हुए सुप्रसिद्ध वाक्य "धर्म जनता के लिये अफ़ीम है" इसका मुख्य सिद्धान्त रखा। कई साल से सोते हुए देश को नवयुवकों के प्रदर्शन और चिल्लाहट ने उठाकर बैठा दिया और असहयोग के दिनों का विद्रोही देश पुनः सावधान होकर खड़ा हो गया। सोशलिस्ट युवक कान्फ्रेन्स, बंगाल विद्यार्थी परिषद् और बम्बई प्रान्तीय युवक संघ के वार्षिक अधिवेशनों में आप सभापति हुए और आपके सतत उद्योग,

सर्व व्यापी कार्य और प्रभावशाली लगन को देख कर देश आपका मुंहचिता हो गया।

इसी समय देश और कांग्रेस के सामने यह प्रश्न उपस्थित था कि ऐसे संकट काल में—राष्ट्र की विषम परीक्षा के समय—कांटों का ताज कौन पहने? राष्ट्र के नेतृत्व की बागडोर किन हाथों में दी जावे? देश के सभी नेताओं ने व्यक्तिगत और सम्मिलित रूप में महात्मा जी से इस उत्तरदायित्व को ग्रहण करने का अनुरोध किया किन्तु गांधी जी ने दृढ़तापूर्वक अस्वीकार करते हुए नेहरू जी को ही इस पद के लिये सर्वथा योग्य ठहराया। अस्तु, पंडित जवाहरलाल जो अविरोध राष्ट्रपति चुने गये। मैं उन्हीं दिनों 'पंडित जवाहरलाल नेहरू की जीवनी और व्याख्यान' नामक पुस्तक लिख रहा था। जब मैं इस कार्य में सहायता मांगने पहली बार आपके पास गया तो पंडित जी ने बड़ा गम्भीरता के साथ कहा था, "इस समय और आगे आने वाले डेढ़ साल मेरे पास इस काम के लिये एक मिनट भी नहीं है, जनवरी सन् ३१ में आना"। अपने गुरुतर पद के उत्तरदायित्व का आपको इतना विशेष ध्यान था।

दिसम्बर के पहले सप्ताह में अखिल भारतीय मज़दूर संघ का अधिवेशन नेहरू जी के सभापतित्व में झरिया में हुआ। इस अवसर पर आपकी प्रशंसा करते हुए दीवान चमनलाल

झरिया और लाहौर कांग्रेस

ने कहा था "पंडित जवाहरलाल जी साहस, चातुर्य्य, और लावण्य की प्रतिमूर्ति ही जान पड़ते थे। कोई भी संस्था इससे बढ़कर सभापति पाने की आशा नहीं कर सकती"। झरिया कान्फ्रेन्स के तीन सप्ताह बाद ही लाहौर में राष्ट्रीय महासभा की बागडोर आपने अपने हाथ में ली। आप ही के सभापतित्व में महात्मा गांधी ने पहली जनवरी सन् ३० के प्रातः काल पूर्ण स्वाधीनता सम्बन्धी प्रस्ताव महासभा में रखा। जिस समय यह प्रस्ताव पास हुआ उस समय आपकी अशुध दशा देखने योग्य थी। आनन्द से विह्वल होकर आप बालक की नाईं नाचने लगे थे और पंडाल भर में किलकारी मारते हुए डेलीगेटों को आपने आलिंगन किया था। आपका भाषण युवकों, किसानों और मज़दूरों के लिये प्राणप्रिय और ज़मीदारों तथा पूंजीपतियों के लिये बम्ब का गोला था। सभा-संचालन कार्य में आप सफल सभापति प्रमाणित हुये।

लाहौर कांग्रेस के कुछ सप्ताह पश्चात ही महात्मा जी ने वायसराय को अल्टीमेटम दिया और उनका शुष्क उत्तर पाकर वर्किंग कमेटी ने महात्मा गांधी को डिक्टेटर बना कर युद्ध की घोषणा कर दी। महात्मा जी ने नमक

सत्याग्रह-संग्राम

कानून-अवज्ञा के नवीन कार्यक्रम की उत्पत्ति की और सारे संसार को आक-

र्पित करते हुए अपने ८० साथियों के साथ दांडी में नमक बटोरने चल दिये। युक्त प्रान्त में भी इस अवज्ञा की आयोजना हुयी और प्रयाग में ता० १० अप्रैल के दिन प्रथम जत्थे ने पंडित जवाहरलाल जी के नायकत्व में नमक कानून तोड़ा। जब नमक बन रहा था उस समय पंडित जी का आन्तरिक आह्लाद मुख और आंखों से फूटा पड़ता था। पंडित जी उस दिन गिरफ़्तार नहीं किये गये किन्तु दो दिन बाद अकस्मात रास्ते में ही रोक कर जेल भेज दिये गये। आपकी जेल यात्रा की सूचना सारे देश में बिजली की तरह फैल गयी। सारे देश में तहलका मच गया और हज़ारों की संख्या में नर नारी समराग्नि में कूद पड़े। आपके कारावास में रहने ने आपकी उपस्थिति से विशेष कार्य किया, और आन्दोलन चौकड़ी भर कर आगे बढ़ने लगा। फल स्वरूप सप्रू जयकर संधि-योग की सृष्टि हुई और पंडित जी यरवदा जेल ले जाये गये। यरवदा से लौटकर आपने महात्मा जी को जो पत्र लिखा था वह सर्वथा आपके अदम्य लड़ाकूपन के उपयुक्त था।

नेहरू जी अपना कारावास-काल समाप्त करके ता: ११ अक्टूबर को छूटे। जिस समय आप रिहा हुये उस समय पंडित मोतीलाल जी की अवस्था बिगड़ चली थी, किन्तु अर्जुन की नाईं मोह माया छोड़कर देश हित के महान उद्देश्य की सिद्धि के लिये आप आते ही समराग्नि में बिजली की

तरह, आंधी पानी की तरह कूद पड़े। एक क्षण भी आपने आराम नहीं किया। जब पंडित जी जेल से छूटकर आये उस समय मैं फ़ैज़ाबाद जेल में था और ८ नवम्बर को जेल से निकल कर आपसे मिलने की आशा करता था। किन्तु एक सप्ताह बाद ही सूचना मिली कि नेहरू जी तो गिरफ़्तार होगये। यद्यपि आप केवल सात दिन ही जेल से बाहर रह सके किन्तु उन सात दिनों में ही आपने ब्रिटिश सत्ता को हिला दिया। रूस के उन दस दिनों के समान जिन्होंने सारे संसार को कंपा दिया था, यह सात दिन भी भारत के इतिहास में अमर रहेंगे। करबन्दी के आन्दोलन को देश व्यापी रूप देकर और सत्याग्रह संग्राम की प्रगति में एक बलशाली धक्का मार कर पुनः जेल गये।

अभी आपको जेल में रहते तीन महीने ही हुए थे कि प्रधान मंत्री की घोषणा हुयी और सरकार की समझौता-रुचि के कारण आप बिना किसी शर्त के अन्य कांग्रेस नेताओं के साथ मुक्त कर दिये गये। जब आप जेल से आये, उस समय पंडित मोतीलाल जी की दशा बहुत बिगड़ी हुई थी और सारे कांग्रेस नेता जेल से छूट कर सीधे उनके दर्शन के लिये आ रहे थे। इस दशा में भी जब वर्किंग कमेटी की बैठकें स्वराजभवन में हुईं तो आपने सदा की नाईं स्थिरचित्त से भाग लिया। देश के दुर्भाग्य से पंडित मोतीलाल जी ने ता: ६ फरवरी को

देहावसान किया और सारा देश शोक-संविग्न हो गया। उस समय भी आपने अपनी साम्य बुद्धि नहीं खोयी और शोक क्रिया में कुछ दिन भी न देकर महात्मा जी के साथ समझौता वार्तालाप के लिये दिल्ली चल दिये। उन दिनों अपने ज़िले का कार्यभार मेरे ही ऊपर था और मुझे ज़िला कांग्रेस कमेटी की आज्ञा से अपने मित्र बाबू केशवनारायण अग्रवाल के साथ, समझौता के सम्बन्ध में अपनी परिस्थिति कार्यकारिणी के समक्ष उपस्थित करने जाना पड़ा था। उस समय जब मैं पण्डित जी से मिला तो आप सदा की नाईं प्रसन्न थे; दैवी विपत्ति का जब मैंने हवाला दिया तो आप केवल दो एक क्षण मौन रहे और उसके बाद फिर गम्भीरता पूर्वक युद्ध के सम्बन्ध में बात करने लगे। जब मैं अन्तिम बार चलते समय आपसे मिला तो आप प्रसन्नता से गद्गद् हो रहे थे। अपने आजन्म देश निर्वासन का हवाला देकर आपने मुझे इस प्रकार विदा किया जैसे वह जीवन का अंतिम दर्शन हो। 'हरि इच्छा बलीयसी, आपकी यह इच्छा पूरी न हो सकी और गांधी अर्विन समझौता हो गया।

समझौते के बाद आपने इसका अर्थ समझाने के लिये युक्त प्रान्त में दौरा किया और समझौता भंग पर कड़ाई के साथ ध्यान रक्खा। सतत यातना और अविरत परिश्रम से आपका स्वास्थ्य गिर गया और आप

समझौते के बाद मई के महीने में स्वास्थ्य सुधारने सप-लीक लंका गये। लंका में पंडित जी का बहुत सम्मान हुआ और वहां पर जो आपने व्याख्यान दिये उनकी एंग्लो इन्डियन पत्रों ने भूरि भूरि प्रशंसा की। वहां से लौट कर जब से आप आये हैं तब से समझौता के सम्बन्ध में दिन रात परिश्रम कर रहे हैं। गांधी-विलिंगडन समझौते पर आपके सहयोग ने जो प्रभाव डाला था उसका उल्लेख स्वयं महात्मा जी ने यंग इन्डिया में इस प्रकार किया है, "मैं इस गुप्त रहस्य को प्रकट कर दे सकता हूं कि उनकी उपस्थिति के बिना और प्रधानतया पण्डित जवाहरलाल की स्पष्ट और ज़ोरदार आलोचना के बिना समझौता का रूप अन्तिम रूप से कहीं भिन्न रहा होता"। आज महात्मा जी इंगलैंड में हैं और देश का सारा भार आप ही के कंधों पर है।

× × × × ×

प्रोफेसर सुधीन्द्र बोस सन् २६ में जब अमेरिका से भारत आये थे तो वे नेहरू द्वय से भी मिले थे। आपने पण्डित जी के व्यक्तित्व का निम्नलिखित वर्णन दिया है, "उनमें सुसंस्कृत व्यक्तित्व सभ्य पुरुष की प्रतिभा और सौजन्य था उनका मुखमंडल प्रभाव शाली था,...... मैंने अपने काल्पनिक जगत में उन्हें भारत का लेनिन चित्रित किया था। मेरे सामने वह

बुद्धिमान युवक खड़े थे जो भारत के शासकों के लिये हौआ बन रहे थे। मैंने आश्चर्य चकित होकर उनकी ओर देखा। अवस्था में ४० साल के भीतर, तौल में १०० पौंड के लगभग, शान्तिमय प्रतिभा और इस पर भी जीवन-जाग्रति की परा काष्ठा। स्फूर्ति की किरणें उनके शरीर से फूट रहीं थीं और उनकी चमकती हुई काली आंखों की पुतली में जाकर एकत्रित होती जान पड़ती थी......मेरे मस्तिष्क में नेहरू और लेनिन की समानता दृढ़ होकर बैठ गयी। नेहरू में वैसा ही जी जान से काम करने का गुण था और वैसा ही अपने काम में चिपटे रहने का स्वाभाव था जैसा रूस के नेता में"। पण्डित जवाहर-लाल जी का व्यक्तित्व नैसर्गिक रूप से पिता की समता का नहीं है किन्तु अपने उपार्जित गुणों और महान तपस्या से आपने देदीप्यमान ओज धारण किया है और आप मिस्टर ए० फैनर ब्राकवे के शब्दों में "आधुनिक समय में संसार के महान शक्तिशाली और प्रभाव शाली व्यक्तियों में से एक हैं"।

पंडित जवाहरलाल जी की प्रथम विशेषता है—अपरिमित कार्यशक्ति और स्फूर्ति। जिस दिन से आपने सार्वजनिक जीवन में पैर रखा है उस दिन से लेकर आज तक इस गुण में आप सबसे आगे रहे हैं। इस गुण के कारण ही आपके सहयोगी आपके प्रति श्रद्धा रखते हैं और मात-

विशेषताएं

हृत आपकी उपासना करते हैं। इस गुण के कारण ही आप सफल प्रधान मंत्री रहे हैं और आज भारतीय जनता की दृष्टि में इतने उच्च पद पर पहुँच गये हैं।

नेहरू जी की दूसरी विशेषता है—परिवर्तन शीलता। आपके जीवन में कई बार भीषण परिवर्तन हुए हैं। मिस्टर ब्रुक्स के स्पर्श में आकर विलासी वायुमंडल में भी सादगी अपनायी, हेरो, केम्ब्रिज, और लन्दन में रह कर विलासी अंग्रेज़ियत सीखी, महात्मा गांधी के सत्संग के कारण फ़कीरी ली और रूस जाकर साम्यवादी हो गये। अपने उक्त गुण के कारण ही पंडित जी परिवर्तन और क्रांति के पुजारी हैं।

पंडित जी की तीसरा विशेषता है—युद्ध प्रियता और जोखिम में आनन्द आना। पण्डित जी को युद्ध में आनन्द आता है। आपने गांधी जी को स्वयं लिखा था, "मैं युद्ध में प्रसन्न होता हूं, इसमें ही मैं अपने को जीवित अनुभव करता हूं"। जोखिम उठाने में आपको आनन्द आता है "ख़तरे में रहो" आपका आदर्श वाक्य है। मेरठ जेल के अभियुक्त श्री पूर्णचन्द्र जी जोशी ने अपनी डायरी में लिखा था, "जवाहरलाल कायर नेता हैं"। यह उक्ति कहां तक ठीक है यह पण्डित जी के जीवन से ही स्पष्ट है।

पण्डित जी की चौथी विशेषता है—आदर्शवादिता और उग्रता। अपने इस गुण के कारण ही आज आप नव भारत

की प्रतिमूर्ति हैं। लड़कपन से लेकर आज तक आप आदर्श वादी और उग्र रहे हैं।

नेहरू जी की पांचवीं विशेषता है—देशहित के लिये स्वकीय भावनाओं और विचारों का दबा देना। इस गुण का आपने कई बार परिचय दिया है। यद्यपि पण्डित जी आदर्श वादी और उग्र हैं किन्तु हठी नहीं हैं। कलकत्ता कांग्रेस में अपनी भावनाओं को कुचल कर आपने महात्मा जी के समझौता प्रस्ताव को मान लिया था और इसी प्रकार दिल्ली के नेताओं के घोषणा पत्र पर अनिच्छा रहते हुए भी हस्ताक्षर कर दिये थे। सप्रू जयकर को महात्मा जी के लिये जो पत्र आपने दिया था उसमें लिखा था, "......किन्तु मैं जानता हूं कि प्रायः लोग युद्धप्रिय नहीं हैं और शान्ति चाहते हैं, इसीलिये मैं अपने को दबाकर शान्तिमय दृष्टिकोण से देखने की बहुत चेष्टा करता हूं"।

पण्डित जी की छठवीं विशेषता है—विद्रोही स्वभाव और अगाध देश प्रेम अपने सिद्धान्तों पर दृढ़ रहकर आपने पिता से भी विद्रोह किया। प्रत्येक प्रकार के ढकोसलों और पुरातनवाद से आपको विद्रोह है। नेहरू जी देशप्रेम की प्रतिमा हैं। निष्काम देशसेवा ही आपका आजीवन व्यवसाय बन गया है और देश की पवित्र वेदी पर आपने अपना सर्वस्व उत्सर्ग कर दिया है।

पण्डित जवाहरलाल जी में इनके अतिरिक्त अनेक गुण हैं

महात्मा गांधी ने आपके सभापति निर्वाचित किये जाने के बाद आपके गुणों का निम्नलिखित उल्लेख किया था शूरवीरता में उनसे कोई बाजी नहीं ले सकता। देशप्रेम में उनसे चढ़ बढ़ कर कौन है? कुछ लोग कहते हैं, 'वे उतावले और उग्र हैं। इस समय यह गुण तो एक अच्छी विशेषता है। और यदि उनमें योद्धा का सा उतावलपन और उग्रता है, तो उनमें राजनीतिज्ञ की सी बुद्धिमत्ता भी है। वे संयम प्रिय हैं और उन्होंने मन उचटाने वाले कामों में भी अपने को कड़ाई के साथ संयमित रख के दिखा दिया है। निस्सन्देह वे उग्र विचारक हैं और अपनी परिस्थिति से कहीं आगे सोचते हैं। किन्तु वे इतने काफी नम्र और व्यवहारिक भी हैं कि वे कभी ऐसा पग नहीं उठाते जिससे बात बिगड़े। वे स्फटिक मणिवत पवित्र हैं, उनकी सत्यशीलता सन्देह से परे है, वे अहिंसक और अनिन्दनीय योद्धा हैं, राष्ट्र उनके हाथों में सुरक्षित है"।

इङ्गलैंड जाते समय महात्मा जी ने यंग-इंडिया में लिखा था; "मिस्टर ऐनाल्ड तथा अन्य मित्रों ने मुझसे कम से कम जवाहरलाल जी को तो लन्दन साथ में ले जाने को कहा है। वे निर्भय हैं और फिर भी नम्र हैं। कमज़ोरी और कमज़ोर करने वाली कायरता से अपरिचित हैं और इसी कारण वे कमज़ोरी को एक क्षण में पकड़ लेते हैं। कूटनीतिज्ञता से रहित रहने के कारण वे गोलमोल भाषा से घृणा करते हैं और वास्तविकता

तक सीधे पहुँचने पर ज़ोर देते हैं। चूंकि मैं अपने को आदर्श वादिता में उनसे आगे समझता हूं तो वे मुझसे आगे होने का दावा करते हैं। मैं उनका सम्मान करता हूं और इसीलिये अपने बहुत से मित्रों की इस भावना के साथ सहयोग करता हूं कि मुझे ठीक मार्गपर बनाये रखने के लिये और सन्देह के समय 'डिक्शनरी' का काम देने के लिये जवाहरलाल जी को साथ रखना चाहिये"।

पण्डित जवाहरलाल जी अतिशय निर्मोही हैं। पण्डित मोतीलाल जी की मृत्यु पर आपकी विचित्र मुद्रा देखकर सभी लोग स्तम्भित थे। अपने वचन और प्रोग्राम को निभाने का आपको बड़ा ध्यान है और समय के आप बहुत पाबन्द हैं। अभी कुछ ही दिन पहले मैं स्वामी स्वराज्य प्रकाश जी के साथ आपको इटावा के लिये आमंत्रित करने गया था तो आपने कहा था "मैं वचन कम देता हूं और जब देता हूं तो सारे काम छोड़कर उसे निभाता हूं"

पण्डित जी के राजनैतिक विचार प्रारम्भ से ही समय से आगे रहे हैं। जब से आप महासभा में सम्मिलित हुए उस दिन से आज तक आपका स्थान बायीं पंक्ति (गरमदल) में ही रहा है। आप परिवर्तनशील हैं और

राजनैतिक विचार

इसी कारण आपके राजनैतिक विचारों में भी परिवर्तन होता रहा है। सन् २१

में और उसके बाद कई वर्ष आप प्रत्येक पहलू से महात्मा गांधी के अनन्य भक्त रहे किन्तु रूस से लौटकर आप अपने गुरू के बहुतेरे सिद्धान्तों के विरोधी और साम्यवाद और लेनिन के पुजारी हो गये। आज आप पूर्णस्वतंत्रतावादी और साम्य-वादी हैं।

अहिंसा में आपका अटूट विश्वास है। सन् २३ में आपने कहा था, "मैं विश्वास करता हूं कि भारत और सचमुच सारे संसार की मुक्ति अहिंसात्मक असहयोग से ही होगी"। आपने सप्रू जयकर को गांधी जी के लिये जो पत्र दिया थ उसमें इस विश्वास को पुन: दुहराया था, "शक्ति की दृष्टि से आहिंसा की शक्ति पर मैंने विचार किया है और पहले से कहीं अधिक इसका भक्त बन गया हूं"। पण्डित जी षड्यन्त्रका-रियों के हिंसात्मक आन्दोलन को व्यर्थ समझते हैं। सन् २३ में युक्त प्रान्तीय कान्फ्रेंस में आपने कहा था, "मैं नहीं समझ सकता कि कुछ लोग कैसे अनुमान करते हैं कि अव्यव-स्थित हिंसा स्वतंत्रता को हमारे निकट ला सकती है"। आज भी आप व्यक्तिगत हत्याओं को घृणित और अनुपादेय मानते हैं।

आदर्श राज्य की कल्पना में आप साम्यवादी हैं। पन्जाब प्रान्तीय कान्फ्रेंस में आपने कहा था, "हमारा आदर्श केवल एक प्रजातंत्रराज्य ही हो सकता है जिसमें साम्यवाद

अपना एक विशेष स्थान रखता हो"। पुनश्च बंगाल विद्यार्थी परिषद् में आपने कहा था "मैं कम्युनिज्म में एक सामाजिक आदर्श की दृष्टि से विश्वास रखता हूं क्योंकि मेरी सम्मति में साम्यवाद ही एक ऐसा मार्ग है जिसमें दुनियां घोर विपत्ति से रक्षा पा सकती है"। साम्यवाद के साथ अपने मतभेद का उल्लेख पंडित जी ने ट्रेडयुनियन कांग्रेस में किया था 'साम्यवाद के लिये पूर्ण सहानुभूति रखते हुए भी, मुझे यह अवश्य स्वीकार करना पड़ता है कि मैं उसके बहुत से तरीकों को पसन्द नहीं करता। पंडित जी ने सन् २८ में प्रयाग डिस्ट्रिक्ट बोर्ड के मानपत्र का उत्तर देते हुए आदर्श राज्य की निम्नलिखित कल्पना की थी, "योग्यता और अध्यवसाय के अनुसार ही सम्मान पद मिलना चाहिये। जाति, कुल अथवा धन के कारण नहीं। हमें चाहिये कि एक दूसरे को अपना भाई समझें; न कोई नीचा हो न ऊँचा, न कोई पूजा का अधिकारी हो न कोई घृणा का पात्र, सब एक दूसरे के साथ बराबरी का और भाई चारे का व्यवहार करें और इस अच्छे देश और इसकी पैदावार के बटवारे में उनके अधिकार बराबर ही रहें"। पंडित जी ज़मीदारी प्रथा के तीव्र विरोधी हैं। सन् २८ में युक्त प्रांतीय कांग्रेस में आपने कहा था "ज़मींदारी प्राचीनकाल की जागीरदारी का अंतिम चिन्ह है जिसका वर्तमान दशा से कोई जोड़ नहीं है। इस कारण ज़मींदारी प्रथा का नाश हमारे कार्य क्रम का

एक प्रधान अंग होना चाहिये और उसके स्थान में ऐसे छोटे छोटे भूमि विभाग होने चाहिये जो साधारण तौर पर एक कुटुम्ब के जोतने भर को पर्याप्त हों'।

पंडित जवाहरलाल जी पूर्णस्वतंत्रता ही नहीं चाहते, आप भारत के लिये सामाजिक और आर्थिक स्वतंत्रता भी चाहते हैं। मेरी पुस्तक पंडित जवाहरलाल नेहरू की जीवनी और व्याख्यान, के लिये ब्रिटिश इन्डेपन्डेन्ट लेबर पार्टी के नेता मिस्टर ए० फैनर ब्राकवे ने जो पत्र लिखा था उसमें कहा था, "आज के बीस साल पहले भारत के राष्ट्रीय नेतागण शासन सत्ता में भारत की उन्नत जातियों के लिये कुछ मौन की याचना करके संतुष्ट हो जाते थे। दस साल पहले प्रधानतया महात्मा गाँधी के प्रभाव के फलस्वरूप वे पूर्ण राजनैतिक स्वतंत्रता मांगने लगे। जवाहरलाल जी की विशेषता यह है कि वे केवल राजनैतिक और सामाजिक स्वतंत्रता नहीं चाहते किन्तु साथ ही आर्थिक स्वतंत्रता भी"। सन् २८ में पंजाब प्रांतीय कान्फ्रेंस में आपने कहा था "हमें ब्रिटिश साम्राज्य का भारत में न केवल राष्ट्रीय भाव से विरोध करना चाहिये वरन सामाजिक और औद्योगिक दृष्टि से भी"।

पण्डित जवाहरलाल जी के सामाजिक विचार पूर्णतया क्रान्तिकारी हैं। आपके शब्दों में "हमारे बहुत से आचार विचार, पुराने ढर्रें, सामाजिक नियम, जातिभेद, स्त्रियों का

समाज में पतित स्थान, और धर्म के
सामाजिक विचार
बोझीले ढकोसले अतोल की वस्तुएँ हैं।
वे उस गत युग में भले ही उपयुक्त हों
किन्तु वर्तमान परिस्थिति के सर्वथा प्रतिकूल हैं"। आपने अपने जीवन में इन क्रांतिकारी विचारों को पूर्ण स्थान दिया है। हिन्दू मुसलिम प्रश्न में आपके विचार बड़े पण्डित जी से मिलते हैं किन्तु आप उस समस्या का हल ग़रीब और अमीर का वर्गयुद्ध खड़ा करके करना चाहते हैं।

पण्डित जवाहरलाल जी को लोग प्रायः अनैश्वरवादी कहते हैं, किन्तु यह धारणा मिथ्या है। पंडित जवाहरलाल जी कर्मयोग के अनुगामी हैं और गीता आपकी प्रिय पुस्तक है। इस पुस्तक को आप सफ़र में भी साथ रखते हैं। पिता की मृत्यु के समय आपने जिस धैर्यशीलता और वैराग्य का परिचय दिया था वह अनैश्वरवादी में हो ही नहीं सकता। हां आप धर्म और धार्मिक प्रथाओं के आधुनिक रूप के कट्टर विरोधी हैं। धर्म का दुरुपयोग देखकर आपका हृदय काँप गया है और इसी कारण आपको इसके नाम से भी चिढ़ है। आप प्रत्येक बात को विवेक की कसौटी पर कसते हैं और जो इस पर खरा उतरता है इसी को आप धर्म मानते हैं। आपका सिद्धान्त है, "धर्म बहुत से हैं किन्तु विवेक केवल एक है"।

नेहरू-द्वय

तृतीय अध्याय

पिता-पुत्र

नेहरू द्वय के चरित्र पठन से यह भली भांति प्रमाणित हो जाता है कि वे दोनों ही पृथकरूपेण स्वावलम्बी व्यक्तित्व हैं। दोनों की ही अपनी विशेषताएं और अपने विचार हैं। कहीं उनमें साम्य है और कहीं उनमें प्रतिकूलता सर्वसाधारण तुलना हैं। इतने निकट स्पर्श में रहकर और एक दूसरे से प्रभावित होकर भी उन्होंने अपनी निजी मौलिकता सदा बनाये रखी है और इसी कारण राष्ट्र के निर्माण में उन दोनों का पृथक योग है। नेहरू पिता-पुत्र की प्रकृति समान रूप से कुलीन अथवा शासक की नाईं रही है। जिस वायुमंडल में वे रहे सहे उसकी यह नैसर्गिक उपज

है। इस प्रकृति के कारण ही हम दोनों को सफल सेनाध्यक्ष पाते हैं, दोनों ही अपने दल को सुसंगठित और आज्ञाकारी बनाये रखने में सफल हैं और दोनों का ही अपने साथियों और अनुगामियों के साथ फ़ौजी व्यवहार है। दोनों ही अपने अपने क्षेत्र में प्रसिद्ध लड़ाकू हैं और उनकी प्रकृति युद्धप्रिय है। अगाध देश प्रेम और अद्भुत त्याग में पिता पुत्र समान हैं। दोनों ही अपने लक्ष्य की पूर्ति के लिये सर्वस्व बलिदान करने के लिये तत्पर हैं। उनके विचार जगत में भी कई क्षेत्रों में समानता है। हिन्दू-मुसलिम समस्या पर दोनों के विचार एक से ही हैं; सामाजिक सुधार के सम्बन्ध में दोनों ही क्रांतिकारी और अतिशय नवीन विचार के हैं, धर्म के दुरुपयोग से दोनों के ही हृदय पके हैं और धर्म के नाम से दोनों को ही चिढ़ है।

किन्तु पिता-पुत्र में समानता से प्रतिकूलता अधिक है। विशेषताएं और विचार दोनों ही की दृष्टि से वे एक दूसरे से बहुत दूर हैं। पंडित मोतीलाल जी महान मस्तिष्क हैं, पंडित जवाहरलाल जी विशाल हृदय हैं। पंडित मोतीलाल जी की मस्तिष्क शक्ति के सामने सारा भारत नत मस्तक है किन्तु अपनी हार्दिक दुर्बलता के कारण वे राजनैतिक क्षेत्र में जवाहर-लाल जी का अनुसरण करते हैं। दूसरी ओर पंडित जवाहर-लाल जी पिता जी की जेल यातना, भीषण रोग और मृत्यु पर भी द्रवित नहीं होते। पण्डित मोतीलाल जी बड़े कामों में

बड़े हैं किन्तु पण्डित जवाहर लाल जी छोटे से छोटे कामों को भी वैसी ही तन्मयता से करते हैं जैसे बड़े को। पिता व्यवहार और पुत्र आदर्शवादी हैं। पिता शान्ति प्रिय हैं और पुत्र उग्र तथा परिवर्तन शील हैं। पण्डित मोतीलाल जी कूटनीतिज्ञ हैं और व्यर्थ मतभेद करना पसन्द नहीं करते। पंडित जवाहरलाल जी अपने सिद्धान्तों को डंके की चोट स्पष्ट कहते हैं। इसी कारण पिता ने सर्वप्रिय होकर लखनऊ कान्फ्रेंस में सारे भारत को अपने नेतृत्व में एकत्रित किया और पुत्र ने सारे धनी समाज को अपना शत्रु बना लिया। इसी कारण पिता के भक्त अंगुलियों पर गिनने योग्य बनसके और पुत्र का अनुयायी आज सारा दरिद्र भारत है। राजनैतिक विचारों में पंडित मोतीलाल जी राष्ट्रवादी हैं और धनी, निर्धन, ज़मींदार, किसान सभी का प्रजातंत्र चाहते हैं। पंडित जवाहरलाल जी साम्यवादी हैं और मज़दूर और किसानों का राज्य श्रेयस्कर समझते हैं।

राजनैतिक सम्बन्ध

पिता-पुत्र का राजनैतिक सम्बन्ध प्रारम्भ से अन्त तक प्रेम पूर्ण नहीं रहा है। सन् १९०८ में जब पंडित जवाहरलाल जी केम्ब्रिज में पढ़ते थे आजन्म वैमनस्य का श्रीगणेश हो चला था। श्रीनगेन्द्रनाथ गुप्त ने उसी साल की अपनी भेंट के वर्णन में लिखा है, "नैविन्सन की अनुपस्थिति में मुझसे और पंडित मोतीलाल जी से कुछ बातें हुईं। पण्डित

मोतीलाल जी अपने लड़के के इंग्लैंड में बढ़ते हुए राजनैतिक विचारों के ऊपर चिन्तित थे"। इंग्लैंड से आकर भी पण्डित जवाहरलाल जी की यही दशा रही। पिता जी की इच्छा के विरुद्ध आपने श्री सुन्दरलाल और मन्जूरअली सोख़ता के उग्र दल का साथ पकड़ा और राजनैतिक क्षेत्र में पिता के विरोधी बने। इस प्रश्न पर पिता-पुत्र के वैमनस्य के कारण नहीं मालूम आनन्दभवन कितने दिन कलहभवन रहा होगा और कितने दिन का भोजन नीरस होगया होगा। सन् १९१७ में जब पण्डित मोतीलाल जी लखनऊ प्रान्तीय कान्फ्रेंस के सभापति थे तो पण्डित जवाहरलाल जी भी वहां उपस्थित थे। पण्डित मोतीलाल जी ने अपने उन दिनों के राजनैतिक विचारों के अनुसार श्रोताओं से यह कहकर ब्रिटिश जनता में बिश्वास रखने की अपील की, "क्योंकि वे ही हमारे भाग्य के अंतिम निर्णायक हैं। पण्डित जवाहरलाल जी ने इन शब्दों पर अपना तीव्र विरोध प्रकट करने के लिये चिल्लाकर 'प्रश्न' कहा। इस अद्भुत साहस पर बड़े पण्डित जी और जनता सभी स्तम्भित होगई। इसके प्रत्युत्तर में पण्डित मोतीलाल जी ने कहा "कौन इस धारणा पर प्रश्न करने का साहस करता है। कहा जाता है कि पण्डित जी ने आगे उत्तेजित होकर यह भी कहा कि भारत में तुरन्त ही होमरूल होना विचार के बाहर की बात है। पुत्र के कारण ही पण्डित जी पक्के होमरूल लीगर होगये।

रौलट बिल के विरोध में महात्मा गांधी जी ने अपना स्वदेशी और अनशन का सत्याग्रह आन्दोलन चलाया। पंडित जवाहरलाल जी ने अपील निकलते ही प्रतिज्ञा पत्र भर दिया। पंडित मोतीलाल जी सत्याग्रह-प्रतिज्ञा के एक भाग से तो सहमत थे किन्तु दूसरे भाग पर अपने हस्ताक्षर न करना ही बुद्धिमत्ता समझते थे। प्रयाग की एक सार्वजनिक सभा में पंडित मोतीलाल जी ने अपने इन्हीं विचारों की स्पष्ट घोषणा कर दी। पंडित जी जब ज़ोर से कह रहे थे, "मैं सत्याग्रही नहीं हूं" उसी समय एक ओर से 'लज्जा' का नारा लगा। यह वही विद्रोही पुत्र की सुपरिचित आवाज़ थी। इस घटना ने महीनों नेहरू-भवन को दु:खी रखा।

पंडित मोतीलाल जी प्रारम्भ में असहयोग आन्दोलन के विरोधी थे और असहयोग प्रस्ताव के विरोध में दास बाबू का साथ दे रहे थे; किन्तु पंडित जवाहरलाल जी आदि से ही असहयोगी और गांधी-भक्त हो गये थे। कहा जाता है कि कांग्रेस मीटिंग के ठीक पहिले पण्डित जवाहरलाल ने पिता जी से बातचीत की और फलत: पण्डित मोतीलाल जी गांधी जी के अनुगामी हो गये। जेल से लौटने के बाद पण्डित जवाहरलाल जी स्वराजपार्टी में भी पिता का साथ न दे सके। यद्यपि इस अवसर पर उन्होंने बड़े पण्डित जी का विरोध नहीं किया किन्तु साथ ही उनका सहयोग भी नहीं किया।

विदेश यात्रा से पण्डित जवाहरलाल जी पूर्णस्वतंत्रता वादी और साम्यवादी बन कर भारत आये और स्पष्ट रूप से अपने इन दोनों सिद्धांतों की घोषणा करके उन्होंने महासभा को अपनी ओर खींचा। इन दोनों सिद्धांतों की ओर पण्डित मोतीलाल जी की विशेष सहानुभूति न थी अस्तु पिता और पुत्र लखनऊ के सर्वदल सम्मेलन में एक दूसरे के विरोध में खड़े हुए; दोनों ही अपने अपने दल के नेता थे। सर्वदल सम्मेलन में पण्डित जवाहरलाल जी ने 'औपनिवेशिक स्वराज्य' और 'व्यक्तिगत सम्पत्ति' की धज्जियाँ उड़ाई और अपने पिता की कृति नेहरू रिपोर्ट के विरोध में सम्मेलन से सदलबल उठकर चले आये। कलकत्ता कांग्रेस में भी पिता-पुत्र अपने विरोध विचारों को लेकर कांग्रेस मंच पर युद्ध करने पहुँचे, किन्तु महात्मा गांधी के उद्योग से समझौता हो गया और पिता पुत्र दोनों की ही बात रह गयी।

सत्याग्रह संग्राम के दिनों में पंडित मोतीलाल जी ज़मींदारी के गढ़ युक्तप्रान्त में लगानबन्दी के पक्ष में न थे। किन्तु पंडित जवाहरलाल जी सारे देश से पहले युक्तप्रान्त में करबन्दी का आन्दोलन ठीक समझते थे। कहा जाता है कि पंडित मोतीलाल जी ने पंडित जवाहरलाल जी से जेल में भेंट करने के बाद उनके इसरार के कारण ही युक्तप्रान्त में लगानबन्दी की अनुमति दी थी। इस प्रकार आदि से अन्त तक पिता-पुत्र अपने राज-

नैतिक विचार जगत में प्रतिकूल रहे।

पण्डित ज्योतीप्रसाद जी निर्मल ने अपनी 'पण्डित मोती-लाल जी की जीवनी' नामक पुस्तक में लिखा है, "यह कहना अत्युक्ति न होगी कि पण्डित मोतीलाल जी नेहरू को राज-नैतिक क्षेत्र में लाने वाले पण्डित

पिता पर पुत्र का प्रभाव

जवाहरलाल जी नेहरू ही हैं।" पिछले पृष्ठ इस बात के प्रमाण हैं कि यह धारणा अत्युक्ति ही नहीं वरन् सर्वथा निर्मूल है। जिस समय पण्डित जवाहरलाल जी ने जन्म भी नहीं लिया था उस समय पण्डित मोतीलाल जी कांग्रेस में सम्मिलित हो गये थे और जिस समय पण्डित जवाहरलाल जी ने राजनैतिक जीवन की बारा-खड़ी भी प्रारम्भ नहीं की थी उस समय पण्डित मोतीलाल जी सन १९०७ में युक्त प्रान्तीय कान्फ्रेन्स के सभापति हो चुके थे। हाँ यह कहना अवश्य अत्युक्ति न होगी कि पण्डित मोतीलाल जी अपने राजनैतिक विचारों के भीषण परिवर्तन में प्रधानतया पण्डित जवाहरलाल जी से ही प्रभावित हुए। 'लीडर' के भूतपूर्व सम्पादक श्री नगेन्द्रनाथ गुप्त ने अप्रैल सन् ३१ के माडर्न रिव्यू में लिखा था, "जहाँ तक जाना जा सकता है, पण्डित जी के अंतिम निर्णय पर दो कारणों का प्रभाव पड़ा था - पहला प्रभाव था उनके इकलौते बेटे जवाहरलाल नेहरू की ज्वलंत देशभक्ति और स्वार्थ त्याग......जवाहरलाल जी

का बाद का जीवन, भारत की राष्ट्रीय स्वतंत्रता के साथ उनका ऐक्य, और बारबार जेल जाना भारतीय युद्ध के अंग हैं। निस्सन्देह जवाहरलाल जी ने पिता के ऊपर बड़ा प्रभाव डाला।"

पण्डित मोतीलाल जी की मृत्यु के बाद कलकत्ते के अंग्रेजी पत्र 'स्टेट्समैन' ने पंडित जी के नरम से गरम हो जाने का निम्नलिखित वर्णन दिया था, "अधेड़ अवस्था में नरम से गरम हो जाने का कारण है—इसके उत्तरदायी हैं महात्मा गांधी और उनके पुत्र पण्डित जवाहरलाल नेहरू। हैरो और केम्ब्रिज की ताज़गी और युवा आदर्शवाद के प्राबल्य के कारण पण्डित जवाहरलाल जी प्रथम असहयोग आन्दोलन के समय महात्मा गांधी के प्रभाव में बह गये। महात्मा गांधी के नैयायिक, आर्थिक और धार्मिक विचार पण्डित मोतीलाल जी के विचारों के सर्वथा प्रतिकूल थे और अबतक उन्होंने विरोध के अतिरिक्त उन विचारों को और किसी दृष्टि से नहीं देखा था। किन्तु पिता का हृदय अपने पुत्र के लिये गर्व और उल्लास से परिपूरित था और वह उन्हें किसी काम के लिये इन्कार नहीं कर सकते थे। कुछ समय के लिये पुत्र ने उन्हें गांधीवाद का भक्त बना लिया। पण्डित जी ने अपनी मालामाल वकालत छोड़ दी, अपने चुस्त इंगलिश कपड़े और चमकदार आयरिश लिनिन उतार कर रख दिये और खद्दर पहना।......कुछ

समय के लिये सम्भवतः उन्होंने अपने को महात्मा जी के विचारों का स्थायी भक्त भी समझ लिया हो। किन्तु प्रधान प्रभाव उनके पुत्र थे, महात्मा गांधी नहीं। पुत्र के हृदय में साबरमती के साधू के लिये वैयक्तिक श्रद्धा तो बनी रही किन्तु गांधी जी के कुछ विचारों की उत्तमता में उनका विश्वास घट चला और नये प्रभाव उनके युवक उत्साह का ध्यान आकर्षित करने लगे। बड़े पण्डित जी ने श्री सी. आर. दास का साथ दिया और लेजिस्लेटिव असेम्बली में पहुँचे जहां वे शीघ्र ही सर्वमान्य और सर्वप्रिय हो गये; तीन साल पहले उन्होंने असेम्बली की यह इच्छा भी मान ली कि वे कैनाडा में होने वाली साम्राज्य कान्फ्रेंस में भारतीय प्रतिनिधियों का नेतृत्व ग्रहण करें यह यात्रा वे न कर सके। इन घटनाओं के साथ साथ उनके पुत्र कम्यूनिज्म की ओर बढ़े और अपने पुत्र के कारण ही वे मास्को भी गये। अन्त में महात्मा गांधी और पण्डित जवाहरलाल का एक नया मेल हुआ। मुख्य विषयों पर उनके विचार भिन्न रहे किन्तु सरकार विरोध कार्यों के लिये महात्मा गांधी का जनसमुदाय पर प्रभाव और छोटे नेहरू की युवक आन्दोलन की शक्ति एक साथ नह दिये गये। एक बार फिर पिता ने पुत्र का अनुगमन किया। पुत्र के लिये उन्होंने वायसराय के उसी गोलमेज़ के प्रस्ताव को अस्वीकार कर दिया जिसे वे असेम्बली में इतने ज़ोरों से मांगते रहे थे"। एम्लो

इण्डियन पत्र की उपरोक्त उक्ति में बहुत से स्थानों पर मतभेद हो सकता है किन्तु यह निर्विवाद सत्य है कि पण्डित मोतीलाल जी ने अपने नैसर्गिक माडरेटपन को प्रधानतया अपने पुत्र के स्नेह और प्रभाव के कारण ही छोड़कर उग्रदल को अपनाया।

राजनैतिक क्षेत्र में पिता और पुत्र ने एक दूसरे को क्या सहायता दी यह कूतना तो एक लेखक के लिये असम्भव है किन्तु हां कुछ बातें ऐसी हैं जो दूर से भी स्पष्ट दीखती हैं।

पारस्परिक सहायता

पंडित जवाहरलाल जी ने जब राजनैतिक जीवन प्रारम्भ किया उस समय धनी मानी और शिक्षित समाज तथा राजनैतिक कार्यकर्ताओं के बीच में पंडित मोतीलाल जी का एक विशेष स्थान था। अत: पंडित जवाहरलाल जी को अपने राजनैतिक व्यवसाय में व्यापारिक शब्दों में पुश्तैनी 'साख' मिली। पंडित मोतीलाल जी की सर्वभारतीय ख्याति बढ़ी और वे भारत के सर्वोपरि नेता हो गये। पंडित जवाहरलाल जी ने इसी साख की गुप्त सहायता और अपने नवीन और क्रांतिकारी विचार तथा कार्यों से सर्वभारतीय नेतृत्व ग्रहण किया। इस साख के साथ ही पं० जवाहरलाल जी को अपने पिता से एक सहायता और मिली और वह थी अपार धन। जिन्हें राजनैतिक क्षेत्र में कार्य करने का अवसर पड़ा है वे यह अच्छी तरह जानते हैं कि अपने क्षेत्र में डटे रहने, अपने क्षेत्र

को बढ़ाने और ख्याति प्राप्त करने के लिये रुपया कितना आवश्यक है। पंडित जवाहरलाल जी को देश और विदेश में दौड़ा करने के लिये धन की कमी न थी और न अपने अच्छे से अच्छे जीवन व्यतीत करने के लिये वर्तमान में या भविष्य में पैसा कमाने की चिन्ता थी। अस्तु, उन्हें निश्चिन्त होकर राजनैतिक क्षेत्र में कार्य करने का अवसर मिला। पंडित मोतीलाल जी ने अपने अमित प्रभाव के कारण पंडित जवाहरलाल जी की उग्रता के परिणामों से ढाल की नाईं उनकी रक्षा करके भी कुछ कम सहायता नहीं पहुँचायी।

जहाँ पंडित मोतीलाल जी के निर्विवाद उन्नत पद ने पुत्र को इतनी सहायता पहुँचायी वहां पंडित जवाहरलाल जी ने भी अपने पिता को राजनैतिक क्षेत्र में गण्यमान सुविधायें दीं। पंडित जवाहरलाल जी ने अपने पिता के विरोधीदल में अग्रणी स्थान पाया और अपने गुणों के कारण सहयोगियों के श्रद्धा भाजन बने। किन्तु साथ ही उनकी अपार पितृ-भक्ति जैसे की तैसी दृढ़ रही। फल यह हुआ कि पंडित मोतीलाल जी के कट्टर से कट्टर विरोधी भी अपने सहयोगी पंडित जवाहरलाल की भावनाओं का ध्यान करके बड़े पंडित जी पर कड़ा हमला करने में झिझकते थे। "जवाहरलाल, दी मैन एन्ड हिज़ मैसेज" नामक पुस्तक में लिखा है "यह दृश्य प्राय: ही देखने में आता था कि प्रसिद्ध नेतागण खुलकर पंडित जवाहरलाल को

मित्रता पर पश्चात्ताप करते हैं और वे दुखी होकर स्पष्टतया कहते हैं कि यह मित्रता उनके पिता के साथ उन्हें उस प्रकार बर्ताव नहीं करने देती कि जिस प्रकार एक विद्रोही के साथ करना चाहिये "। अपरिवर्तनवादी, पूर्ण स्वतंत्रतावादी और साम्यवादी सभी के हाथ और मुंह इस मित्रता से बँधे थे। पण्डित जवाहरलाल जी के अपार स्नेह के कारण पण्डित मोतीलाल जी को एक सुविधा और थी। वे कड़े से कड़े विरोधियों को भी पण्डित जवाहरलाल जी की सहयोगिता के कारण पुत्रवत देखते थे और उनसे हर प्रकार का कार्य ले लेते थे।

नेहरू पिता पुत्र का पारिवारिक सम्बन्ध अतिशय प्रेम पूर्ण और अनुकरणीय रहा है। तीव्र राजनैतिक मतभेद के रहते हुए भी पिता के अलौकिक वात्सल्य प्रेम और पुत्र की अनन्य पितृ-भक्ति में कभी एक क्षण के लिये भी विक्षेप नहीं पड़ा। यही नहीं वरन् जितना ही राजनैतिक मतभेद बढ़ता गया उतनी ही स्नेह और श्रद्धा की मात्रा भी बढ़ती गयी। दोनों को ही एक दूसरे की सच्चाई में विश्वास था और दोनों ही एक दूसरे के महान् त्याग के प्रति श्रद्धा रखते थे। इस कारण जितना ही विरोध बढ़ता था उतना ही वे एक दूसरे की सिद्धान्त-प्रियता और मौलिकता पर गर्व करते थे।

पारिवारिक सम्बन्ध

पण्डित मोतीलाल जी तो प्रेम की मूर्ति थे ही और अपने सारे कुटुम्ब से ही उन्हें स्नेह था किन्तु जवाहरलाल जी तो उन्हें प्राणप्रिय थे। इकलौते बेटे पर उनका सारा स्नेह केन्द्रीभूत होगया था। लड़कपन में राजकुमारों की नाईं लालन-पालन किया और युवा होने पर रुपये को पानी की तरह बहा-कर अच्छी से अच्छी शिक्षा दी। राजनैतिक जीवन में प्रधान-तया इस स्नेह की रज्जु के खिंचाव से ही फ़कीरी ली और देशोद्धार के लिये बड़ी से बड़ी यातनाएं सहीं। जिसने पण्डित जवाहरलाल जी की गिरफ़ारी के बाद पण्डित मोतीलाल जी का भाषण सुना हो वह उस भर्राई हुई आवाज़ और उस प्रति-हिंसा के भाव से इस अगाध स्नेह को भली भाँति कूत सकता है।

पण्डित जवाहरलाल जी सदा पिता जी के सामने बच्चे ही रहे। जब राजनैतिक जीवन में सम्पूर्ण राष्ट्र के कर्णधार बनने जा रहे थे उस समय भी आप पारिवारिक मामलों में "नन्हें" (प्यार का नाम) ही थे। पिता जी के लिये आपके हृदय में अगाध श्रद्धा और सम्मान रहा है। यद्यपि राजनैतिक मतभेद के कारण हफ़्तों पिता पुत्र में बोला चाली नहीं रहती थी किन्तु उनके हृदय प्रेम का नाद अलापा करते थे। ईश्वर ऐसे पिता-पुत्र घर घर पैदा करे।